चकमक

मई, 1994 बाल विज्ञान पत्रिका रु. 5.00





अदिति शर्मा, सात वर्ष, दिल्ली





हर्षा कहार, दूसरी, सुखतवा, होशंगाबाद, म.प्र.

चकमक

मासिक बाल विज्ञान पत्रिका

वर्ष-9 अंक 11 मई, 1994

संपादक
विनोद रायना
सह-संपादक
राजेश उत्साही
कविता सुरेश
संपादन सहयोग
टुलटुल विश्वास
कला-सज्जा
जया विवेक
उत्पादन/वितरण
कमलसिंह, मनोज निगम

चकमक का चंदा
एक प्रति : पांच रुपए
छमाही : पच्चीस रुपए
वार्षिक : पचास रुपए
डाक खर्च मुफ्त
चंदा, मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट से एकलव्य के नाम पर भेजें।
कृपया चेक न भेजें।

कागज़ : यूनिसेफ के सौजन्य से।

पत्र/चंदा/रचना भेजने का पता
एकलव्य,
ई-1/208,
अरेरा कॉलोनी,
भोपाल-462016
(म. प्र.)
फ़ोन : 563380

105 वें अंक में

विशेष

कविताएँ

धारावाहिक

हर बार की तरह

और यह भी

आवरण पर : एक ऐसा कैक्टस, जिसकी दुनिया भर में 360 से भी अधिक प्रजातियाँ पाई जाती हैं। इन्हें चुभने वाली नाशपाती, खरहे के कान, चोला आदि नामों से पुकारा जाता है। इसमें फूल अप्रैल-मई में खिलते हैं। यह पौधा श्री जे.जी.सावलकर, भोपाल के बगीचे में लगा है।

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा, जनविज्ञान एवं अन्य क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित अव्यवसायिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

आपके फरवरी 1994 के अंक में माथा पच्ची में पहला ही सवाल था-कि मोनू के घर में एक ऐसा तवा है जिस पर दो रोटियाँ एक साथ सेंकी जा सकती है। एक रोटी एक तरफ से सेंकने में एक मिनिट का समय लगता है। मोनू को तीन रोटियाँ सेंकनी हैं तो कुल कितना समय लगेगा?

इसका उत्तर आपने चकमक के मार्च के अंक में 4 मिनट दर्शाया है जो गलत है। उसका सही उत्तर मैनें बच्चों को तीन मिनट बताया था। जब आपका अंक हमारी शाला में प्राप्त हुआ और बच्चों ने उसका उत्तर देखा तो उसमें 4 मिनिट लिखा था।

तीन मिनट इस प्रकार लगते हैं: वह पहले दो रोटियों को सेंककर एक रोटी नीचे उतार लेगा और दूसरी को पलटकर रख देगा। साथ में एक नई रोटी और डाल देगा। इस तरह दो मिनट में एक रोटी दोनों ओर से तथा दो रोटियाँ एक ओर से सिक जाएँगी। अंत में इन दो अधसिकी रोटियों को एक साथ तवे पर डालेगा। इस तरह तीन रोटियों को सेंकने में कुल तीन मिनट ही लगेंगे।

❑ **घनश्याम दास अहिरवार, सहायक शिक्षक,शा.प्रा.वि. कुलैथ, दतिया,म.प्र.**

(आपका उत्तर बिलकुल सही है। मार्च के अंक में गलत उत्तर छप जाने का हमें खेद है। इस सन्दर्भ में हमें राजकुमार सिंह, पोस्टमास्टर, किशोरगढ़, मुरैना म. प्र. का पत्र भी प्राप्त हुआ है।

-सम्पादक)

आपकी पुस्तक चकमक का मार्च, 94 का अंक पढ़कर लगता ही नहीं कि कोई ज्ञानवर्द्धक या बच्चों के हित की पत्रिका है। आपने इसका मूल्य 5.00 रू. रखा है। यूं तो इसमें पत्रों की संख्या 40 या 42 है किन्तु इसमें आप लिखते क्या हैं एक पूरे पृष्ठ पर बेकार-सी बिना तुक की कविता छाप देते हैं। जिसका कोई भी लाभ या मतलब नहीं होता है। और आपने 23 से लेकर 35 पृष्ठ तक मोजों से दावत नामक कहानी छाप दी जो 5 पृष्ठों पर भी छापी जा सकती थी। और डूबना और तैरना जैसी वाहियात सामग्री छाप दी है। आप जितना पैसा लेते हैं उतना मनोरंजन भी दीजिए। फालतू बातों से पत्रिका भर देते हैं। दो-चार चमचे तारीफ करके पत्र लिख देते हैं या शायद आप दिल से छाप देते हैं। ऐसा करने से जनता को बेवकूफ नहीं बनाना चाहिए तथा आलोचकों का भी ध्यान रखना चाहिए। आपका हर अंक ऐसा ही बेकार है आप अपने विवेक से पूछें तो शायद आपको पता चल जाए।

❑ **जुबेर अहमद, भोपाल, म.प्र.**

पाठक लिखते हैं

मैं आपकी पत्रिका का ग्राहक हूँ व नियमित पाठक भी। बच्चों के स्तर पर निकलने वाली अनेक पत्रिकाओं के ढेर में 'चकमक' की चमक अनूठी है। मेरे अतिरिक्त घर के प्रत्येक सदस्य (उम्र कोई बाधा नहीं) की भी यह एक प्रिय पत्रिका है। हमारी माताजी जो 65 वर्ष की हैं तथा छोटी बेटी जो मात्र 2 वर्ष की है, इसे चाव से पढ़ती हैं व देखती हैं। दादी-पोती का समान लगाव व उनका आपस में चित्र देख-देखकर आनन्द उठाना, दादी का अपने शब्दों में पोती को समझाना, यह सब अनुपम दृश्य है। यही नहीं आस-पड़ौस के बच्चे भी इसे पढ़ने के लिए नियमित तौर पर आते रहते हैं।

❑ **राजेश आत्रेय, समालखा, पानीपत (हरियाणा)**

मैंने आपकी अगस्त 91-92 की चकमक पत्रिका पढ़ी। मुझे बच्चों के विकास के लिए यह पत्रिका बहुत अच्छी लगी। इसे पढ़ने से बच्चों में पढ़ने की रुचि बढ़ती है और बच्चे कुछ खुद करने की कोशिश करते हैं। क्योंकि इसमें पेपर फोल्डिंग भी था और कटिंग करके चिपकाना या घर में पड़ी बेकार चीजों से कुछ बनाना भी। इससे बच्चे पढ़ने में भी बोर नहीं होते।

❑ **सुमिता रोहिला, नई दिल्ली**

एक लेखक लिखते हैं.....

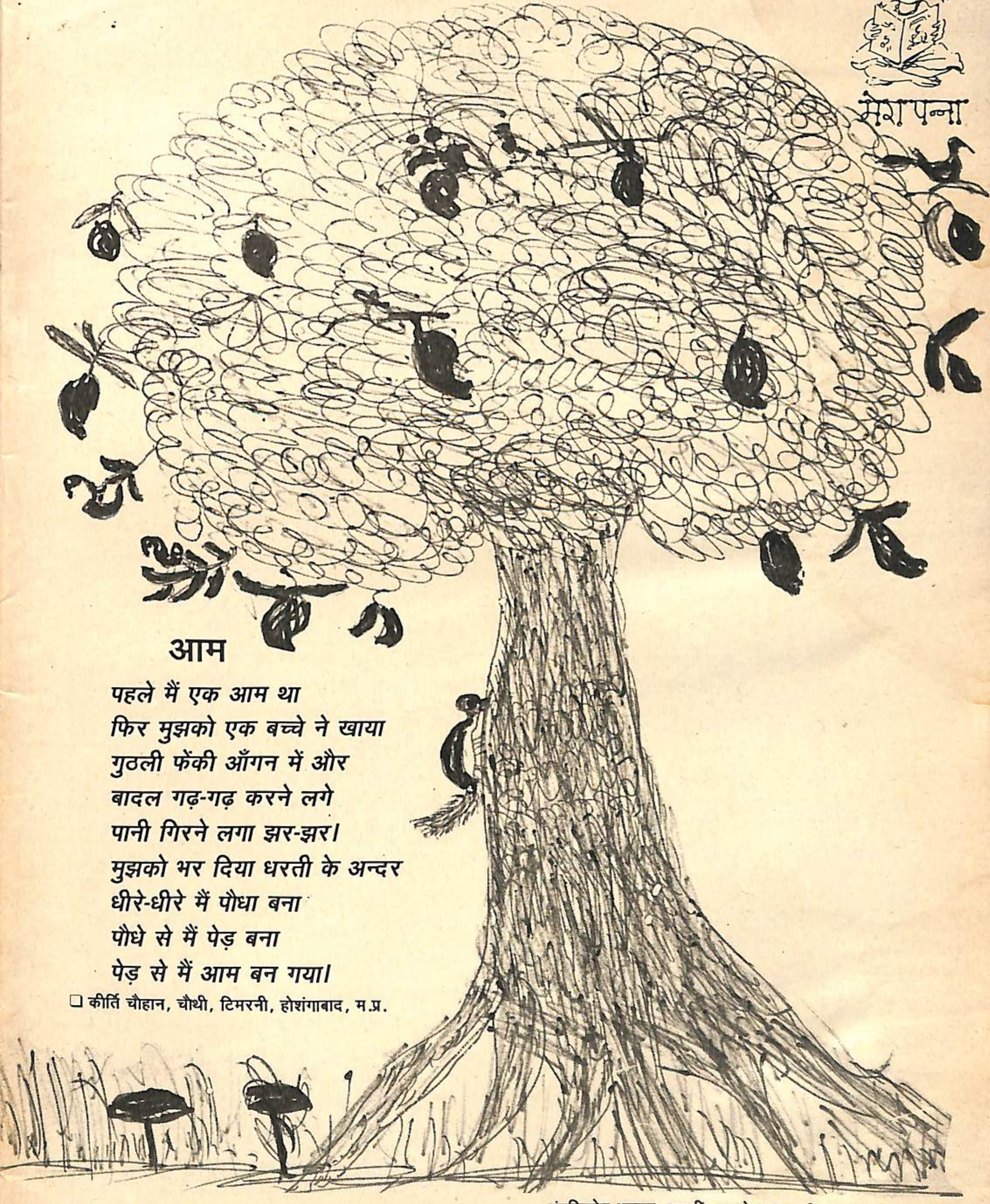
मुझे बहुत खुशी हुई इस बात के लिए कि कम से कम अस्वीकृत रचनाएँ वापस तो मिलीं।

वैसे मुझे तो ये पहले से यकीन था कि स्वीकृति का सवाल ही नहीं उठता। क्योंकि आपने तो मध्य प्रदेश के रहने वाले लोगों की रचनाएँ छापने की सौगन्ध खाई है। सच है आजकल तो हर तरफ वाद ही वाद है और फिर आप प्रदेशवाद का समर्थन करके कोई बुरा तो नहीं कर रहे हैं। यह बात मैं कोई ऐसे ही नहीं कह रहा हूँ मैंने आपका वार्षिक अंक देखा है जिसमें 90% लोग म.प्र. के हैं। और जो बाहर के हैं भी या तो वे आपके अति घनिष्ठ होंगे या फिर बड़े-बड़े धुरंधर लोग हैं। मतलब तो आप समझ गए होंगे कि हम जैसे लोगों को आप स्थान कैसे दे सकते हैं, न डाक्टर और न ही किसी पत्रिका का सम्पादक।

है तो आपकी पत्रिका बालविज्ञान पत्रिका और कागज़ मिलता है यूनीसेफ़ से - पर आपकी पत्रिका देखे कोई तो एकदम दो कौड़ी की लगती है। पता नहीं क्या-क्या बेसिर-पैर की रचनाएँ छापा करते हैं। यदि आप चाहते तो अपने सम्पादन के द्वारा इसे सम्पूर्ण भारतवर्ष में चर्चित कर सकते थे। पर आपको तो अपने ही प्रदेश से प्यार है सो बैठे रहिए।

मेरे लिखने वाले तमाम दोस्तों का आपको एक सुझाव है-क्यों आप यूनीसेफ़ के कागज को हर माह लीप-पोत कर बरबाद कर रहे हैं। इससे तो अच्छा है कि पत्रिका को बन्द ही कर दें।

❑ **ज़ाकिर अली 'रजनीश', लखनऊ, उ.प्र.**



आम

पहले मैं एक आम था
फिर मुझको एक बच्चे ने खाया
गुठली फेंकी आँगन में और
बादल गढ़-गढ़ करने लगे
पानी गिरने लगा झर-झर।
मुझको भर दिया धरती के अन्दर
धीरे-धीरे मैं पौधा बना
पौधे से मैं पेड़ बना
पेड़ से मैं आम बन गया।

❑ कीर्ति चौहान, चौथी, टिमरनी, होशंगाबाद, म.प्र.

नंदकिशोर धनगर, दसवीं, इकलेरा माताजी, देवास, म.प्र.



सुन्दरलाल भीलाला, छठवीं, चौकड़ी खिरकिया, म.प्र.

दादी माँ

मेरे घर के सामने एक वृद्ध महिला रहती थीं। वे बहुत बूढ़ी थीं। मुहल्ले के सारे लोग उन्हें दादी माँ कहते थे और बहुत आदर करते थे। परन्तु उनसे डरते भी बहुत थे। दादी माँ बहुत चिड़चिड़ी थीं और हमेशा सबको डाँटती-फटकारती रहती थीं।

दादी माँ के घर में एक बड़ा बागीचा था। जिसमें आम, जामुन, अमरूद के पेड़ लगे थे। पड़ोस के किसी बच्चे की हिम्मत नहीं थी कि दादी माँ के बागीचे के फल को हाथ लगा पाए। जब फल पक जाते तो दादी माँ पड़ोस के सारे बच्चों को बुलातीं और उनसे पके फल तुड़वाती थीं। बच्चों को तोड़ते वक्त कच्चे फल नहीं तोड़ने को कहतीं और ना किसी बच्चे को फल तोड़ते समय खाने देतीं। टूटे हुए फलों के बराबर-बराबर हिस्से करवातीं और हर एक बच्चे को बराबर-बराबर हिस्सा दे देती थीं।

एक दिन मैं बीमार पड़ गया। डाक्टर की दवा से भी मेरा बुखार नहीं जा रहा था। दादी माँ को जब ये पता चला तो वे मेरे घर आ धमकीं। उसके बाद मेरे माता-पिता के ऊपर बरस पड़ीं। उन्होंने कहा कि उन्हें पहले ख़बर क्यों नहीं की गई। मेरे माँ-बाप अपनी सफ़ाई देते रहे परन्तु दादी माँ सुनती कहाँ थीं। वे बड़बड़ाती रहीं और मेरी जाँच करती रहीं। उन्होंने डाक्टर का नुस्खा देखा। फिर अपने घर जाकर कुछ दवाइयाँ लाईं और मुझे खिलाई। उसके बाद वे लगातार मेरी सेवा में जुट गईं। मेरे माता-पिता ने डरते-डरते कई बार कहा कि वे आराम कर लें। परन्तु दादी माँ तो सारी रात मेरे पास ही बैठी रहीं। सुबह तक जब मेरा बुखार उतर गया तभी वे मेरे पास से उठीं।

उसके बाद मैं बिलकुल ठीक हो गया। अब मेरी समझ में आया कि सब लोग उनके डाँटने-फटकारने के बाद भी उनका आदर क्यों करते हैं।

❑ शानू हर्ष, तीसरी, भोपाल, म.प्र.



गरमी आई रे, छुट्टी आई रे,

गरमी आई, गरमी आई, गरमी आई रे,
छुट्टी आई, छुट्टी आई, छुट्टी आई रे।

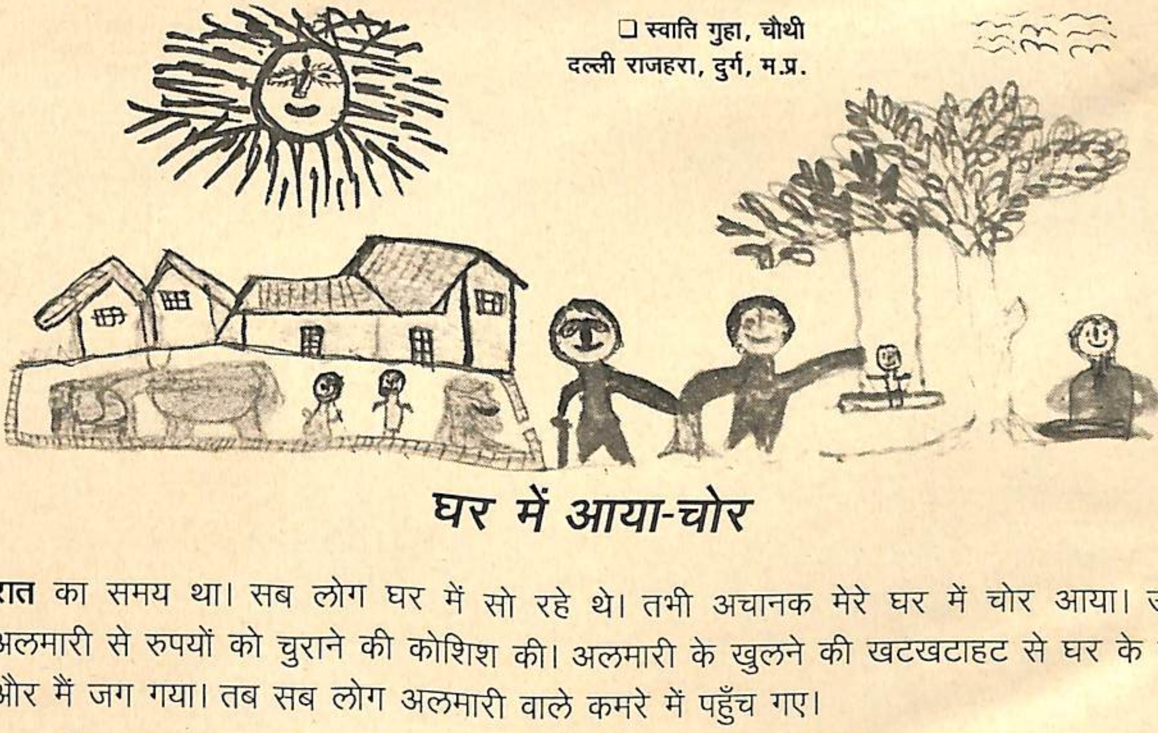
दादी के घर जाना है,
मौज-मस्ती मनाना है।

नानी के घर जाना है,
कटहल, आम खाना है।

भइया मारा, दीदी मारी,
सबके सब हैं अनाड़ी।

छुट्टी बीती मस्त हमारी,
नानी दादी बड़ी प्यारी।

❑ स्वाति गुहा, चौथी
दल्ली राजहरा, दुर्ग, म.प्र.



उमेश कचेर, करकटी, शहडोल, म.प्र.

घर में आया-चोर

रात का समय था। सब लोग घर में सो रहे थे। तभी अचानक मेरे घर में चोर आया। उसने अलमारी से रुपयों को चुराने की कोशिश की। अलमारी के खुलने की खटखटाहट से घर के लोग और मैं जग गया। तब सब लोग अलमारी वाले कमरे में पहुँच गए।

चोर ने बचने के लिए हमें चाकू दिखाया। अचानक मुझे पीछे-से एक डंडा मिल गया। मैंने डंडे को छुपाते हुए डंडा चोर के हाथ पर मारा। डंडा पड़ते ही उसके हाथ से चाकू गिर गया। फिर चोर को पुलिस के हवाले कर दिया।

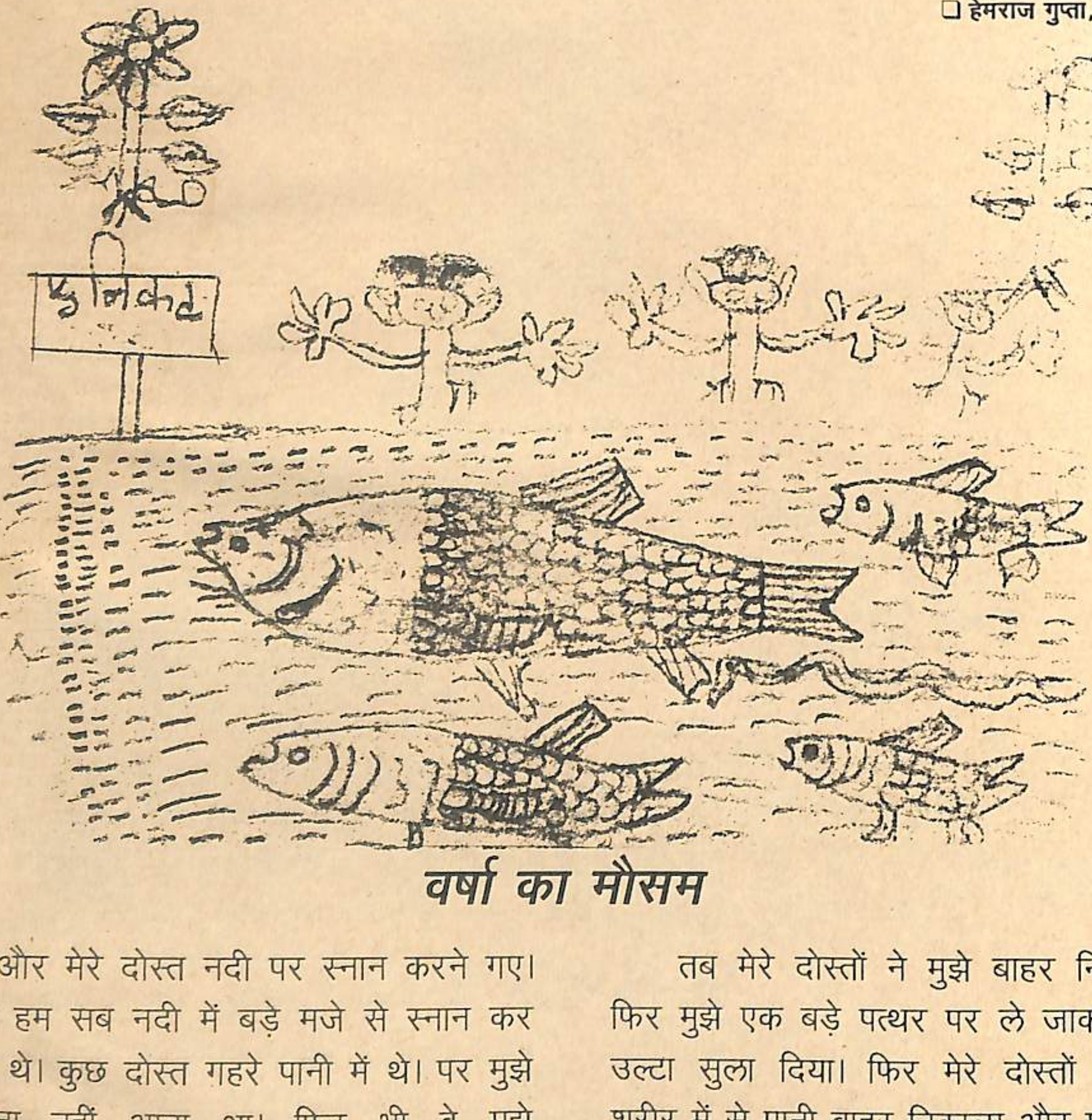
❑ विकास जैन, पाँचवी, अकलतरा, बिलासपुर, म.प्र.

मेरा पन्ना

मैंने तैरना सीखा

हमारे गाँव में एक तालाब है। उसमें वर्षा के दिनों में पानी भर गया। तब मैं एक दिन घूमने के बहाने वहाँ गया। वहाँ कुछ लोग तैरकर नहा रहे थे। तब मैंने भी उसमें स्नान किया और लोगों से तैरने के बारे में पूछा। तब लोगों ने मुझे बताया कि कैसे तैरते हैं। उस दिन मैं घर आ गया किन्तु तालाब में नहाने के कारण मेरी पिटाई हुई। किन्तु मैं रोज़ तालाब पर जाता और तैरना सीखता। फिर एक दिन तैरना सीख लिया।

❑ **हेमराज गुप्ता, बारह वर्ष**



सुभाष त्रिपाठी, सातवीं, सिंहपुर, चित्तौड़गढ़, राजस्थान

वर्षा का मौसम

मैं और मेरे दोस्त नदी पर स्नान करने गए। तब हम सब नदी में बड़े मजे से स्नान कर रहे थे। कुछ दोस्त गहरे पानी में थे। पर मुझे तैरना नहीं आता था। फिर भी वे मुझे जबरदस्ती गहरे पानी में ले गए। और जब मैं डर के मारे रोने लगा, तब वे सब मेरी हँसी उड़ाने लगे। जब मैं पानी में डूब रहा था तब मेरे तो होश-हवास उड़ गए। मैं जोर-जोर से चिल्लाने लगा। पानी मेरे मुँह में चला गया।

तब मेरे दोस्तों ने मुझे बाहर निकाला। फिर मुझे एक बड़े पत्थर पर ले जाकर मुझे उल्टा सुला दिया। फिर मेरे दोस्तों ने मेरे शरीर में से पानी बाहर निकाला और मुझे मेरे घर पर पहुँचा दिया। जब मेरे पिताजी ने मेरी यह हालत देखी तो मुझे तुरन्त अस्पताल ले गए। पाँच-छः दिन बाद मैं बिलकुल स्वस्थ हो गया।

❑ **प्रवीण कुमार टेलर, दसवीं, देसूरी, पाली, राजस्थान.**



क्यों गुदगुदी हमें हँसाती





बतला ना बतला ना अम्मा
आज नहीं तू गुस्सा होना
कहाँ हँसी छिपकर रहती है,
कहाँ छिपा रहता है रोना?

समझा ना समझा ना अम्मा
क्यों गुदगुदी हमें हँसाती?
और मार चाँटे की अम्मा
कैसे हमको बता रूलाती?

हँसी गुदगुदी में होती है
या अम्मा हममें ही रहती?
और रूलाई चाँटे में या
माँ हममें ही छिपकर रहती?

कहाँ सवाल छिपे रहते हैं
और जवाब कहाँ से आते?
कुछ सवाल तो तुझको भी माँ
कितना कितना हैं चकराते?

पर सवाल क्यों मेरे मन में
उभर उभर कर आ जाते हैं?
क्यों जवाब पर तेरे मन को
अम्मा सूझ सूझ जाते हैं?

❑ दिविक रमेश

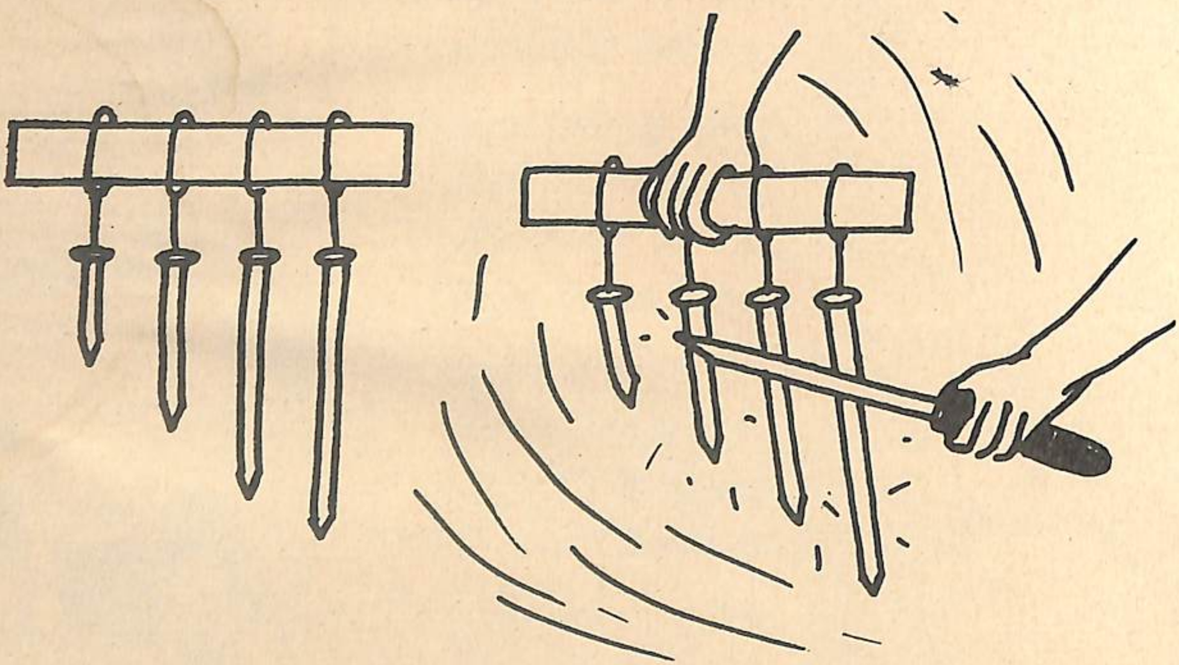
चित्र : अक्षत चराटे





संगीत मण्डली

आख़िर छुट्टियाँ आ पहुँची और साथ में गर्मी भी। वैसे तो गर्मियों की लम्बी दोपहर के लिए कुछ न कुछ तुमने सोचा ही होगा। न सोचा हो तो चलो हम ही कुछ आइडिया दे देते हैं - अपन इस बार अपनी संगीत मण्डली बनाते हैं। फिर गाने-बजाने का मूड हो या नाटक का, माहौल में जान आ जाएगी।



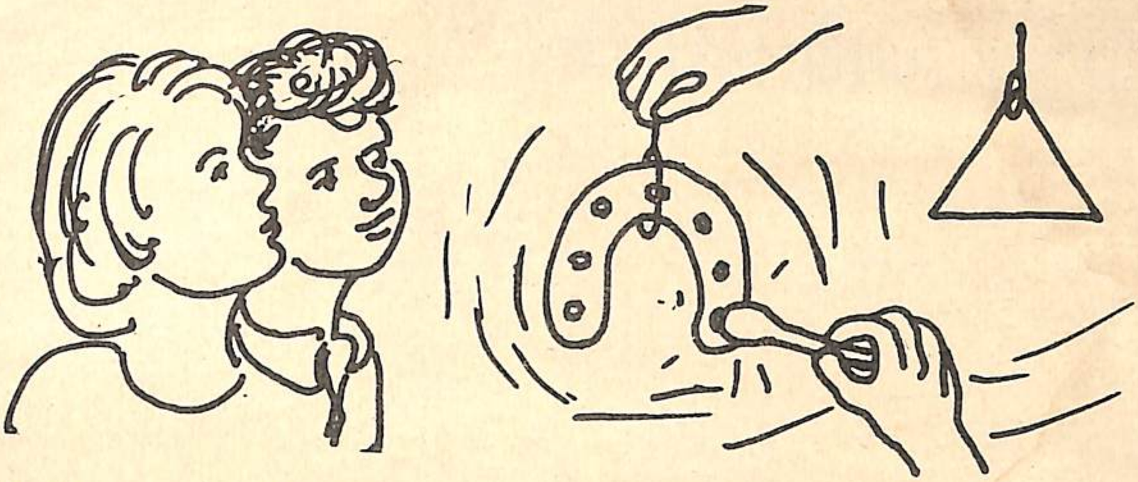
कील तरंग

तुमने पानी से भरी काँच या चीनी मिट्टी की प्यालियों से निकलते संगीत यानी जलतरंग को तो सुना ही होगा। इसमें प्यालियों में पानी भरकर किसी लकड़ी या छड़ आदि से बजाया जाता है।

तुम ऐसा ही कुछ लोहे की कीलों से कर सकते हो। इसके लिए धागा, कुछ अलग-अलग लम्बाई की कीलें, एक लकड़ी और एक चाकू जुगाड़ लाओ।

अब इन कीलों के मोटे सिरे को धागे से बाँधकर चित्र में दिखाए तरीके से लकड़ी की डण्डी पर एक-एक इंच की दूरी पर बाँध लो। ध्यान रहे कि हर धागे की लम्बाई छह इंच से ज़्यादा न हो। साथ ही यह भी कि कीलों को घटते या बढ़ते आकार के क्रम में लटकाना।

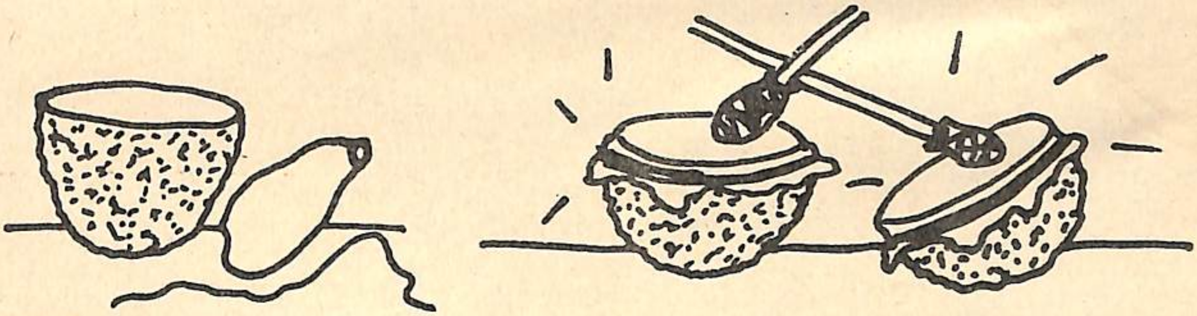
अब लकड़ी को हाथ में उठाओ और इतना हिलाओ कि कीलें आपस में टकराएँ। इन पर हल्के हाथ से चाकू फिराने से घण्टियों की सी मधुर आवाज़ सुनाई देगी। लो तैयार है तुम्हारी कील तरंग।



घोड़े की नाल का संगीत

घोड़े की नाल की बात हो तो कानों में टप-टप की आवाज सुनाई देने लगती है। पर अगर इससे कुछ अलग सुनना चाहो तो घोड़े की नाल, धागा और एक चम्मच ले आओ।

नाल को धागे के एक सिरे से बाँधकर दूसरे सिरे को हाथ से पकड़ लो। अब चम्मच से नाल पर हल्के हाथ से चोट करो। सुनो कैसी आवाज़ सुनाई देती है। घोड़े की नाल की जगह धातु की छड़ से बने त्रिभुज, आयत या अन्य कोई आकार भी ले सकते हो।



नगाड़ा

नगाड़ा शब्द सुनकर तो बड़े से आकार के बाजे का ध्यान आता है। पर हम एक छोटा सा नगाड़ा बनाएँगे।

इसके लिए नारियल की नरेली, एक बड़ा गुब्बारा और धागा ले लो। अब नरेली के मुँह पर गुब्बारे की एक परत तानकर धागे से बाँध दो। बन गया बाजा।

एक पतली लकड़ी के सिरे पर कपड़ा लपेटकर छोटी-सी घुण्डी बनाओ और इससे तने हुए गुब्बारे पर चोट करो। क्या हुआ?

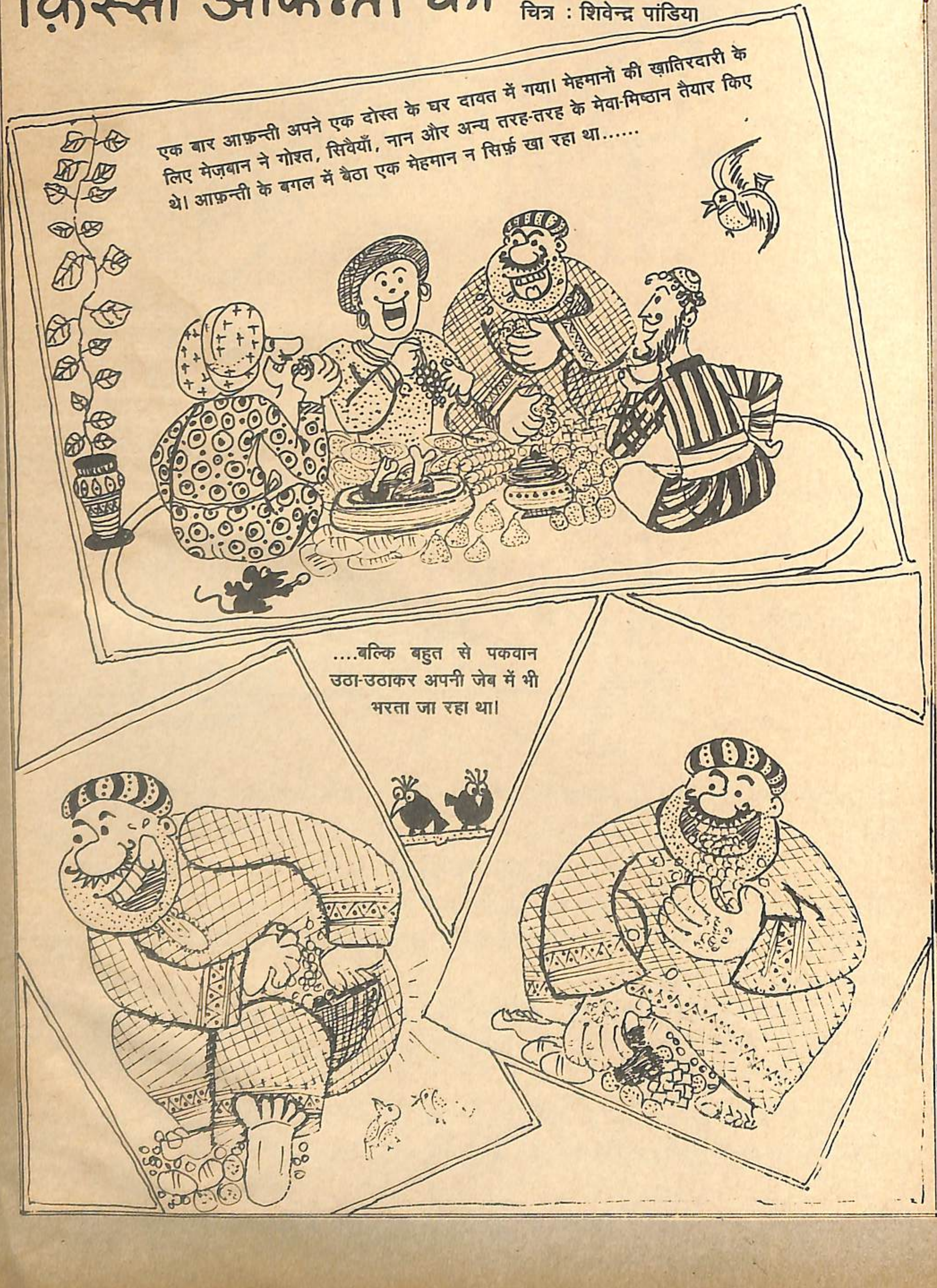
नारियल की जगह टीन का डिब्बा, मिट्टी का कुल्हड़ भी ले सकते हो। इसी तरह गुब्बारे की जगह पन्नी का इस्तेमाल कर सकते हो। चीज़ों के बदलाव से आवाज़ भी अलग तरह की निकलेगी।

आओ चलते-चलते आवाज़ में बदलाव का एक प्रयोग करें। कंघी को पतले काग़ज़ में लपेटकर मुँह के पास लाओ। अब उसमें कुछ बोलो या गुनगुनाओ।

सभी चित्र : सुधा मेहता

क़िस्सा आफन्ती का

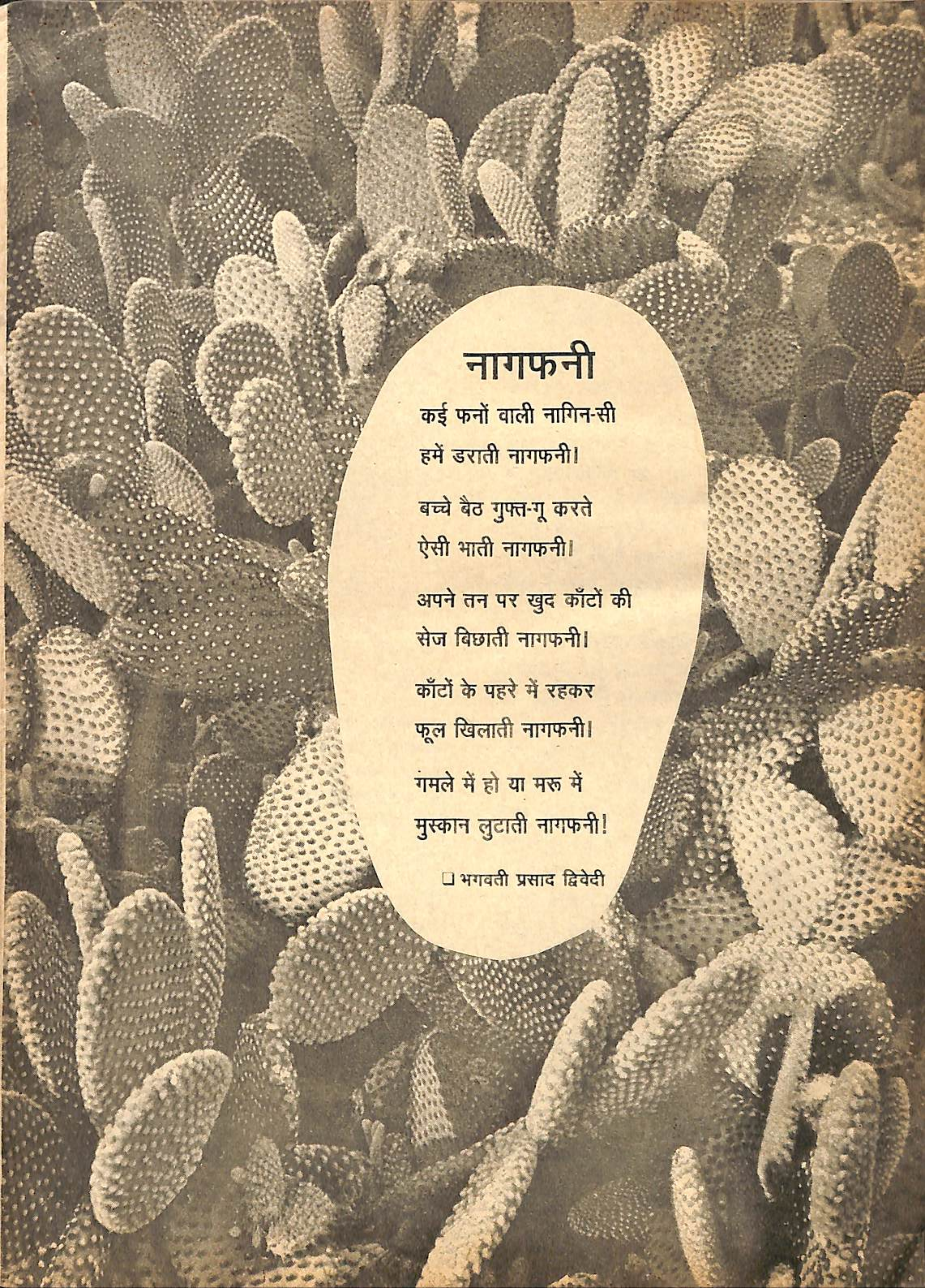
चित्र : शिवेन्द्र पांडिया।





यह देखकर आफ़न्ती ने पानी का जग उठाया और उसकी जेब में पानी उड़ेलना शुरू कर दिया।


यह क्या बदतमीज़ी है।
चिल्लाओ मत, तुम्हारी जेब ने बहुत-सारा खाना खा लिया है, उसे प्यास लग रही होगी। इसलिए पानी पिला रहा हूँ।



नागफनी

कई फनों वाली नागिन-सी
हमें डराती नागफनी।

बच्चे बैठ गुफ्त-गू करते
ऐसी भाती नागफनी।

अपने तन पर खुद काँटों की
सेज बिछाती नागफनी।

काँटों के पहरे में रहकर
फूल खिलाती नागफनी।

गमले में हो या मरू में
मुस्कान लुटाती नागफनी!

❑ भगवती प्रसाद द्विवेदी

कैक्टस

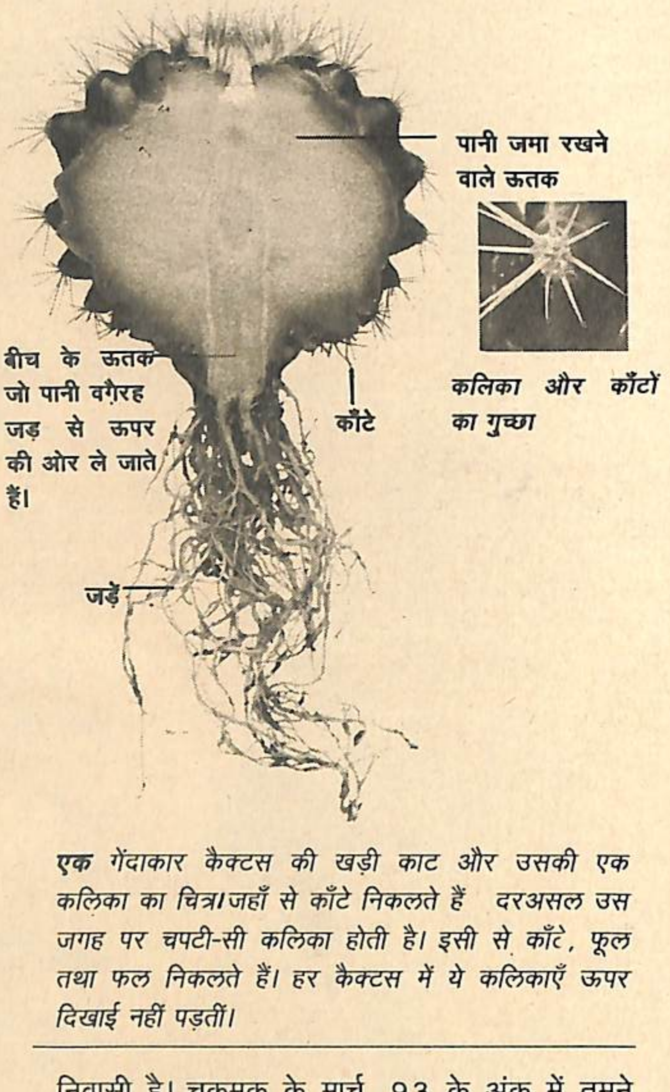
कैक्टस पर जब लेख लिखने बैठा तो मुझे अचानक उन बच्चों की याद आई, जिन्होंने एक स्कूल के बाहर मुझे घेरकर कैक्टस के बारे में पूछताछ की थी। पूछताछ ही क्या, कैक्टस पर अच्छी-खासी बहस हुई थी। बहस के मुद्दे थे कि कैक्टस में काँटे क्यों होते हैं? एक बच्चे ने कहीं पढ़ रखा था और उसने पूछा था कि कैक्टस के पौधे में पत्तियाँ काँटों में क्यों बदल जाती हैं। किसी ने पूछा था कि कैक्टस को यदि महीने दो महीने भी पानी नहीं मिले तो पौधा क्यों नहीं मरता है?

भइया मैं इन सभी सवालों के जवाब तो नहीं दे पाया। क्योंकि मैं भी उतना नहीं जानता था। इन तमाम सवालों के जवाब पाने के लिए मैंने किताबें पढ़ीं, जानकार लोगों से बात की। जब कुछ समझ बनी तो सोचा कि क्यों न चकमक में ही कैक्टस पर लिखा जाए ताकि उन सभी बच्चों के अलावा, तुम्हें भी पता चले।

किताबों में पढ़ा तो जाना कि कैक्टस पौधों का एक ऐसा समूह है जो अपने आप में कई विचित्रताएँ लिए हुए है। तो चलो देखते हैं कि कैक्टस में क्या-क्या विचित्रताएँ हैं और क्यों हैं?

सबसे पहले यह जानना लाज़िमी होगा कि कैक्टस मूल रूप से दक्षिण अमेरिका के रेगिस्तान के निवासी हैं। और ये यहीं से दुनिया के अन्य हिस्सों में पहुँचे। मजेदार बात यह है कि अधिकाँश हिस्सों में मनुष्य ही इन्हें अपने साथ ले गए। जैसे 1492-97 में किस्ट्रोफर कोलम्बस इन्हें अपने साथ यूरोप ले गया। पर भारत में कैक्टस को लाने वाला कोई मनुष्य नहीं था बल्कि प्रवासी पक्षी थे। अब कैक्टस कब और कितने समय में भारत पहुँचे इसकी तो ठीक से जानकारी नहीं है। हाँ, यह जानकारी जरूर है कि पहले अफ्रीका, फिर मेडागास्कर द्वीप और फिर वहाँ से प्रवासी पक्षियों के माध्यम से दक्षिण भारत में पहुँचे।

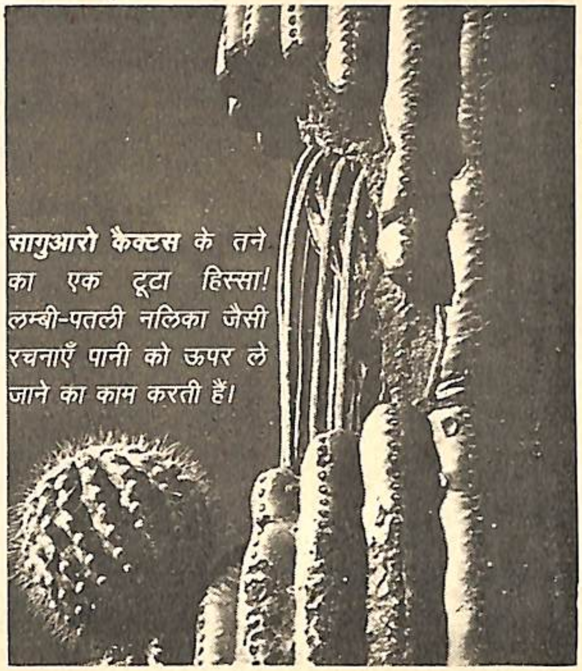
बहरहाल अब हम उन सवालों पर आते हैं जिनके जवाब जानने को तुम उत्सुक होगे। तुम यह तो जान ही चुके हो कि कैक्टस धुर रेगिस्तान का निवासी है। चकमक के मार्च, 93 के अंक में तुमने 'रेगिस्तान' पर एक लेख पढ़ा था। याद आया? रेगिस्तान यानी कि जहाँ पानी की किल्लत और फिर गर्मी के मौसम में तापमान 40 डिग्री से भी ऊपर होना आम बात है।



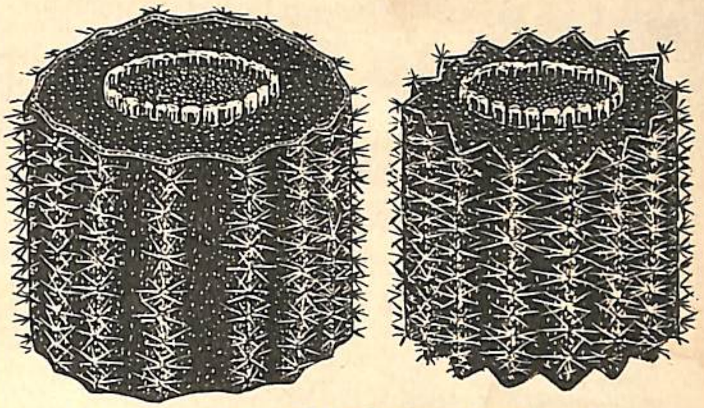
एक गेंदाकार कैक्टस की खड़ी काट और उसकी एक कलिका का चित्र। जहाँ से काँटे निकलते हैं दरअसल उस जगह पर चपटी-सी कलिका होती है। इसी से काँटे, फूल तथा फल निकलते हैं। हर कैक्टस में ये कलिकाएँ ऊपर दिखाई नहीं पड़तीं।

रेगिस्तान में रहने के लिए पहली शर्त तो यह है कि कम से कम पानी में काम चलाओ। रेगिस्तान में बरसात होती तो है पर बहुत कम। कभी-कभी तो दो-तीन साल बरसात होती ही नहीं। तो ऐसे मुश्किल के दिनों के लिए पानी का इन्तजाम होना जरूरी है। कैक्टस के पौधे में ये दोनों ही खूबियाँ हैं।

कैक्टस में जो काँटे होते हैं वे असल में



सागुआरो कैक्टस के तने का एक टूटा हिस्सा! लम्बी-पतली नलिका जैसी रचनाएँ पानी को ऊपर ले जाने का काम करती हैं।



कैक्टस का तना : (बाएँ) पानी सोखकर फूला हुआ। **(दाएँ)** पानी ख़र्च होने पर सिकुड़ा हुआ।

पत्तियों का बदला हुआ रूप है। पानी के ख़र्च को कम करने के लिए ही पत्तियाँ काँटों में बदल जाती हैं। तुम सोच रहे होगे कि पत्तियों के काँटों में बदल जाने से पानी के खर्च में कमी होने का क्या सम्बंध है। इस बात को समझने के लिए पत्तियों के काम पर एक सरसरी नजर डालें। आमतौर पर पत्तियों में मौजूद हरे पदार्थ की मदद से भोजन का निर्माण होता है। पर पत्तियों का एक काम और भी है। पेड़-पौधे अपनी जड़ों से पानी सोखते हैं। इस पानी का कुछ भाग भोजन बनाने में ख़र्च हो जाता है और कुछ अन्य कामों में। बचे हुए पानी का अधिकाँश भाग पत्तियों में बने छोटे-छोटे छेदों से भाप बनकर उड़ जाता है। अब यदि कैक्टस में भी अन्य पेड़-पौधों जैसी पत्तियाँ होती तो तुम कल्पना करो कि उसका क्या हाल होता?

कैक्टस में पानी जमा रखने का इन्तजाम भी अनूठा है। कैक्टस का तना माँसल होता है, जिसमें पानी जमा करने वाले ऊतक होते हैं। इनमें इतना पानी जमा हो सकता है कि अगर दो-तीन साल बरसात नहीं हो तो रेगिस्तान के कैक्टस इससे अपना काम चला लेते हैं। जब भी बरसात होती है या पानी अधिक मात्रा में उपलब्ध होता है तो कैक्टस का तना उसे सोखकर फूल जाता है। और फिर जैसे-जैसे पानी ख़र्च होता जाता है वैसे-वैसे सिकुड़ता जाता है। कैक्टस के तने की एक और ख़ासियत होती है। इसका तना हरा होता है, इस कारण यह भोजन बनाने का काम भी करता है। तने से पानी का वाष्पन रोकने के लिए उस पर मोम की परत चढ़ी रहती है।

कैक्टस की जड़ें भी कमाल की होती हैं। यों अन्य पेड़-पौधों की तरह कैक्टस की जड़ें भी ज़मीन से पानी सोखने का ही काम करती हैं। और ज़मीन की सतह पर फैली रहती हैं। जब भी पानी उपलब्ध होता है ये उसके एक-एक कतरे को सोख लेती हैं।

कैक्टस के काँटे न केवल पानी को उड़ने से रोकते हैं, बल्कि कैक्टस को गर्मी से भी बचाते हैं। ऐसा नहीं है कि कैक्टस में काँटे ही होते हैं। इनमें भी सुन्दर और रंग-बिरंगे फूल भी आते हैं। रेगिस्तान में जब कैक्टस 'फूलता' है तो वह दृश्य कुछ अलग ही होता है। इनमें फल भी बनते हैं और बीज भी।

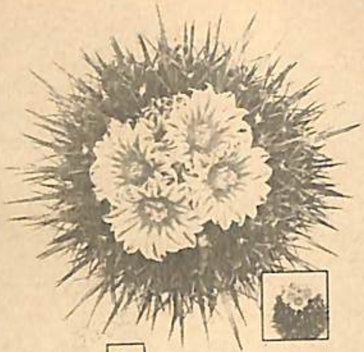
अब तक कैक्टस की लगभग 2000 प्रजातियाँ देखी गई हैं। और इनमें अंगूठे के आकार से लेकर 15 मीटर की ऊँचाई तक के कैक्टस हैं। कैक्टस की बागवानी का शौक भी धीरे-धीरे पनपने लगा है। लोग घरों में भी कैक्टस लगाने लगे हैं। कैक्टस उगाने के लिए रेतीली मिट्टी की ज़रूरत होती है और बहुत कम पानी की। अधिक पानी देने से कैक्टस की जड़ें सड़ने लगती हैं और कैक्टस की बढ़त बन्द हो जाती है।

आगे के पृष्ठों पर तुम तरह-तरह के कैक्टस के कुछ चित्र भी देखोगे!

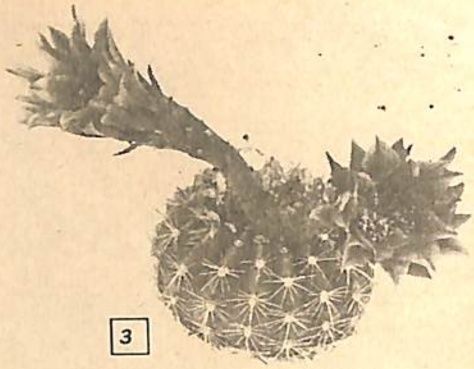
❑ के.आर. शर्मा



1



2



3

1. **कैक्टस** रेगिस्तान में ही नहीं, घर में भी उग सकते हैं।
2. **'तरंग कैक्टस'**, आकार के कारण इसका यह नाम पड़ा। इसमें वसन्त और गर्मियों के बीच कुप्पी के आकार के फूल आते हैं।
3. **सिर्फ़** 8 से 9 सेन्टीमीटर के व्यास वाले इस कैक्टस में गर्मियों की रात में फूल खिलते हैं, वो सिर्फ 24 घण्टों के लिए।

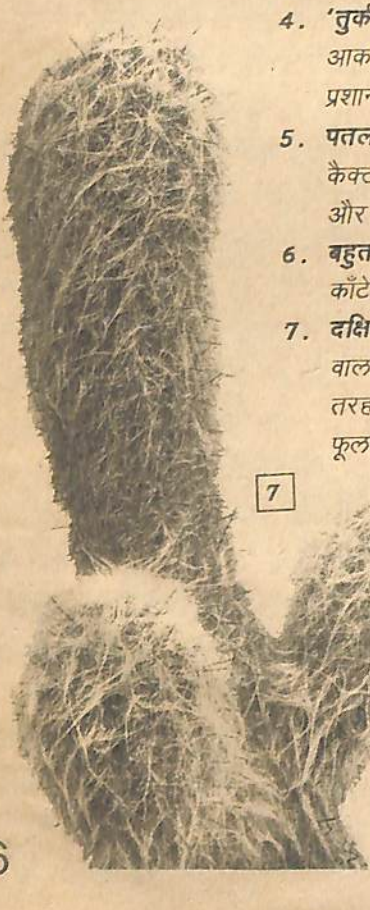


4

4. **'तुर्क की टोपी'**, नीचे से गेंदाकार पर तुर्की टोपी के आकार की काँटेदार आकृति। यह कैक्टस ज़्यादातर प्रशान्त महासागर के द्वीपों पर पाया जाता है।
5. **पतला**, लगभग सीधा और लम्बाई में उगने वाला एक कैक्टस। गर्मियों में हल्के नारंगी रंग के फूल आते हैं। और बाद में छोटे-छोटे लाल-बैंगनी फल।
6. **बहुत** जल्दी उगने वाला एक कैक्टस। इसके रुपहले काँटे खुजली पैदा करते हैं।
7. **दक्षिण** अमेरिका की पर्वतमाला एण्डीज पर पाया जाने वाला 'बूढ़ा आदमी' कैक्टस। पूरे शरीर पर ऊन की तरह रेशे होते हैं। इसमें बहुत अधिक सालों के बाद फूल आते हैं।



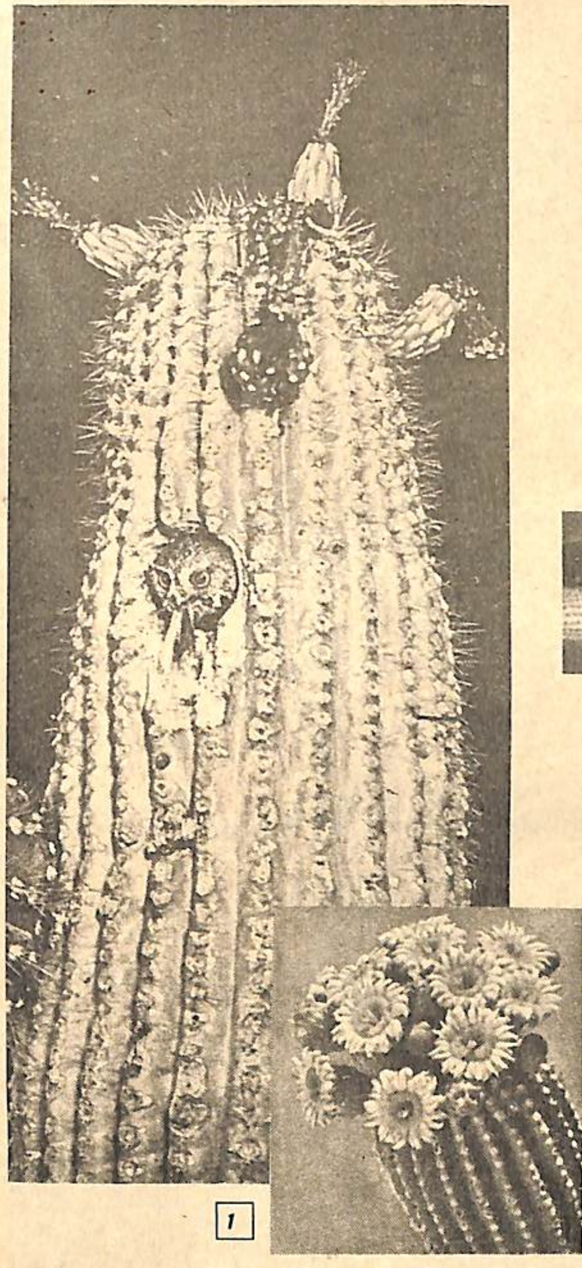
5



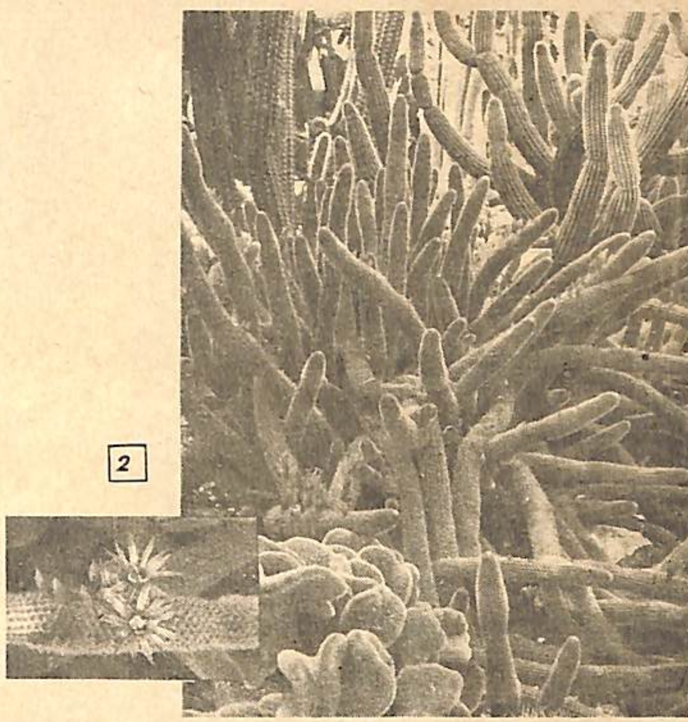
7



6

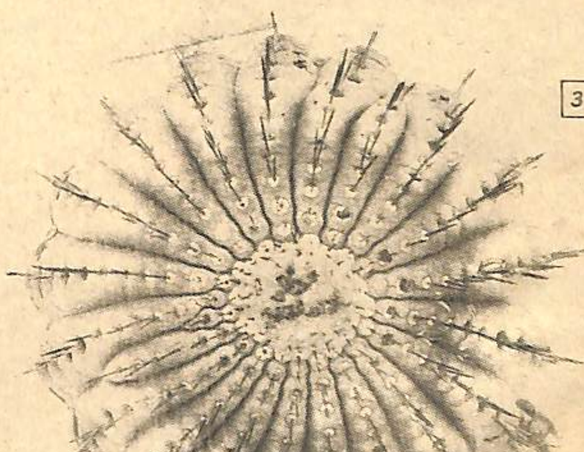


1

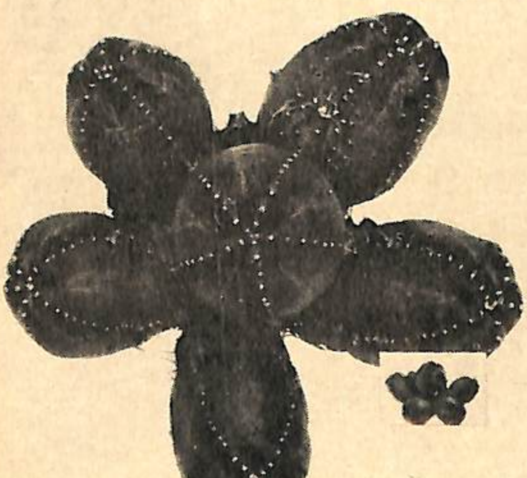


2

1. **सबसे** बड़े कैक्टस सागुआरो के तने में बने घर में उल्लू महाशय। आमतौर पर ये घर कठफोड़वे बनाते हैं लेकिन उल्लू इन पर कब्ज़ा कर लेते हैं। साथ के चित्र में सागुआरो के फूल ।
2. **लम्बी**-पतली डंगालों वाला एक कैक्टस। इसमें वसन्त से गर्मी तक फूल खिलते हैं।
3. **काफ़ी** मुश्किल से उगने वाला एक कैक्टस। इसमें लगभग बीस साल के बाद फूल आते हैं।
4. **गहरे** हरे रंग के कारण आकर्षित करने वाला एक कैक्टस।



3



4



2



1



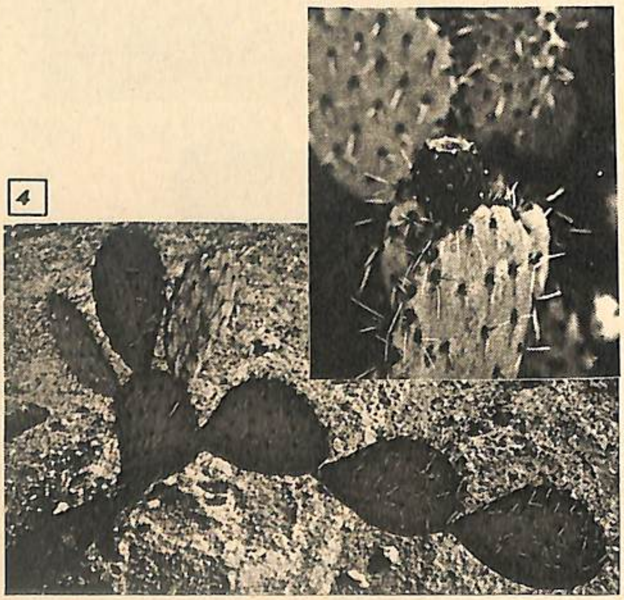
3

1. *'**चोला**' नामक कैक्टस के खिले हुए फूल।*
2. ***उत्तरी** अमेरिका के अरीजोना मरुस्थल में एक कबूतर परिवार कैक्टस में बने अपने घोंसले में।*
3. *'**चोला**' कैक्टस की एक प्रजाति।*
4. ***एक** नन्हा कैक्टस 'प्रिकली पीयर' यानी चुभने वाली नाशपाती। इसे 'खरहे के कान' कहकर भी पुकारा जाता है। साथ के चित्र में प्रिकली पीयर का एक पका फल।*
5. ***बिलकुल** ड्रम जैसा यानी बैरल कैक्टस! है न मज़ेदार!*

(कैक्टसों के विभिन्न चित्र द डेज़र्ट, कैक्टस कन्ट्री (टाइम लाइफ़ सीरीज़), सेन्चुरी पत्रिका तथा द कम्पलीट बुक ऑफ़ कैक्टी एन्ड सक्यूलेन्ट्स से साभार)



5



4



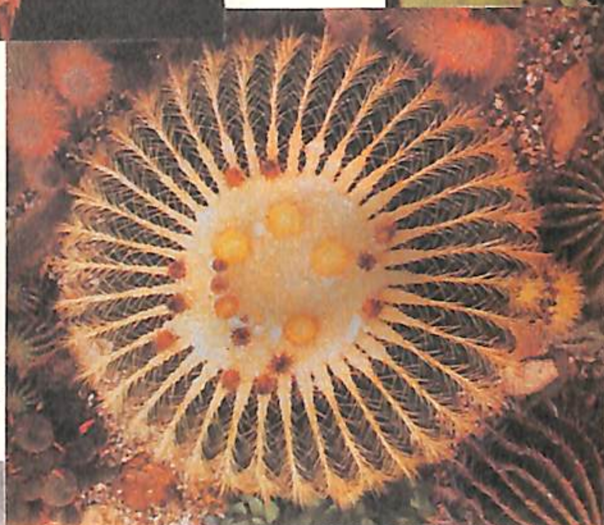
◀ **रेबुटिआ** कैक्टस की एक प्रजाति।



▲ **कैक्टीसिया** की एक प्रजाति।



▲ **प्रिकली** पीयर के फूल।



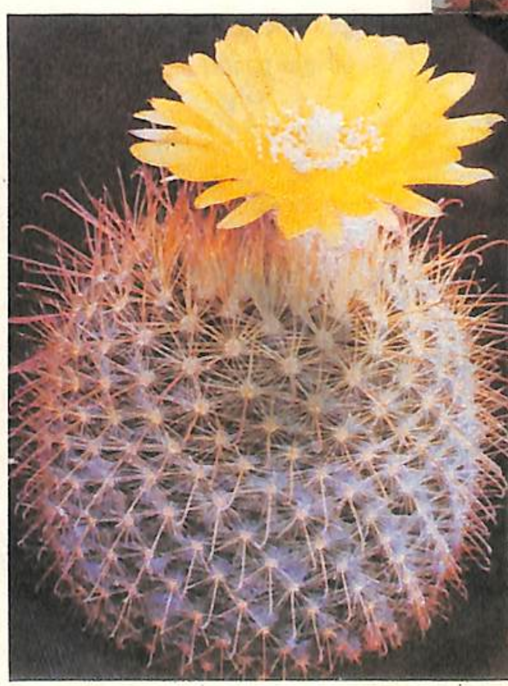
▲ **गोल्डन** बैरल यानी सुनहरा ड्रम।

▼ **बेलनुमा** लटकती डालियों वाला एक कैक्टस।





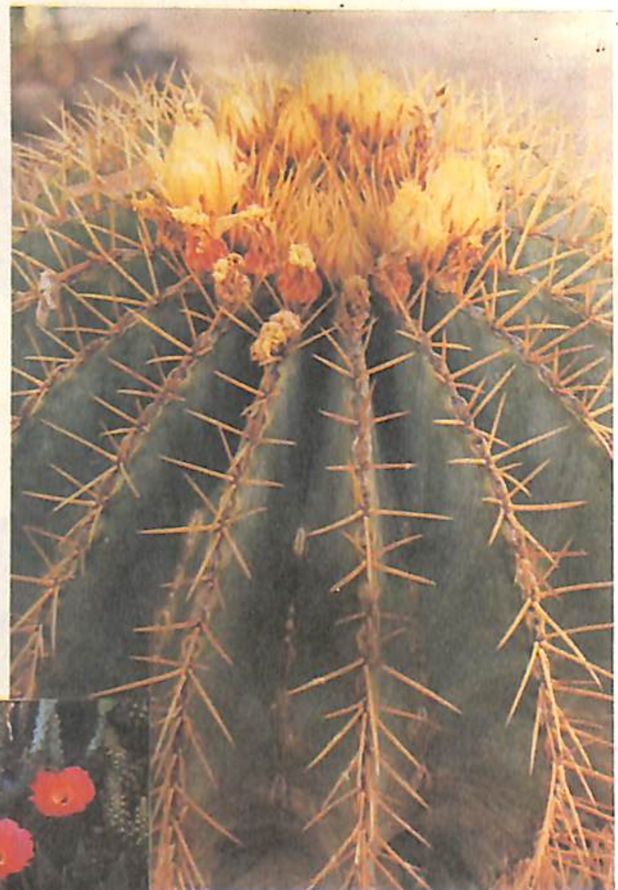
▲ **दक्षिण** अमरीका का एक कैक्टस।



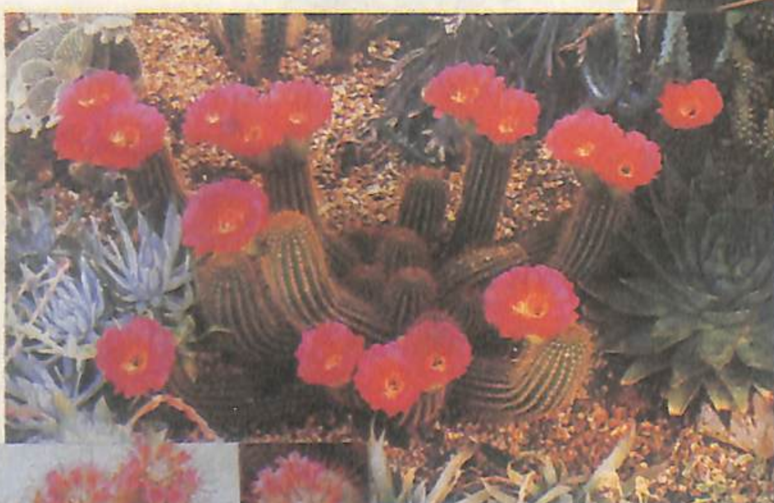
◀ **कैक्टीसिया** की एक और प्रजाति।



▲ ***ममीलारिआ*** कैक्टस की एक प्रजाति।



▲ ***सैलाना*** के गार्डन में बैरल कैक्टस (फोटो : के.आर. शर्मा)।



▲ ***इकोनौप्सिस*** कैक्टस की एक प्रजाति।



▲ ***रेबुटिआ*** कैक्टस की एक और प्रजाति।



▲ ***ममीलारिआ*** कैक्टस की एक और प्रजाति।



◀ **घने** काँटों वाला एक कैक्टस।

जितना यह उतना वह

उद्देश्य

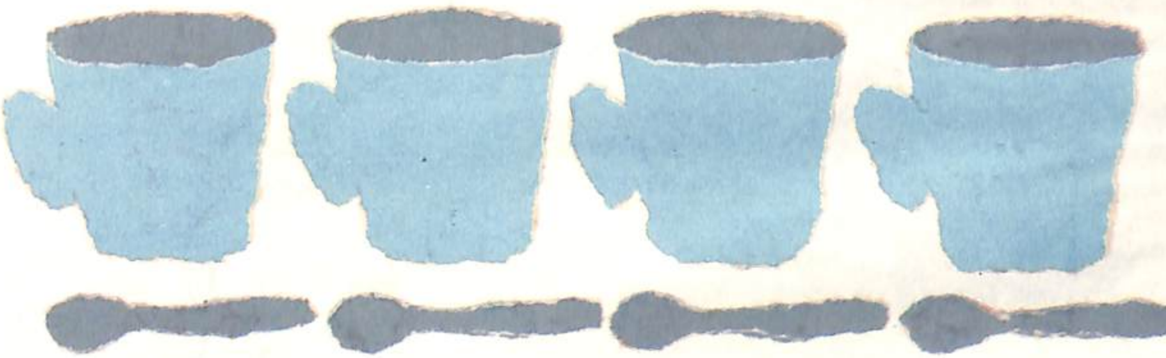
मेल बैठाना और संख्याओं का अनुमान लगाना।

सामग्री

बीज-पत्थर, कापी-पेन्सिल, प्याले-चम्मच जैसी अलग-अलग वस्तुएँ।

बच्चों की संख्या

एक बच्चा



दोनों वस्तुओं को एक दूसरे के साथ रखना



दोनों वस्तुओं को अलग-अलग ढेरियों में रखें और बच्चे से पूछें, "जितने यह हैं उतने वह हैं कि नहीं?"
बच्चे को अपने तरीके से बताने का मौका दें। अक़्सर जो वस्तु आकार में बड़ी है, उसकी ढेरी को वह ज़्यादा बताएगा। अब उसके अनुमान का परीक्षण स्वयं खेल का हिस्सा बनकर करें।

दोनों वस्तुओं की अलग-अलग ढेरी



एक वस्तु की ढेरी और एक को फैला कर रखना



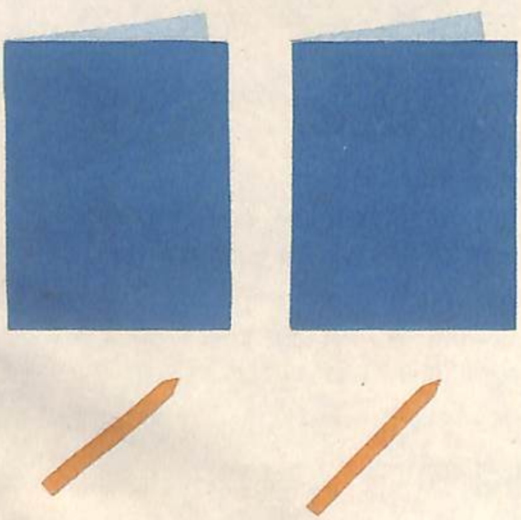
बच्चों के अनुमान का परीक्षण दो प्रकार से हो सकता है-

दोनों ढेरियों की वस्तुओं की एक-एक की जोड़ी द्वारा;

ढेरियों की वस्तुओं को गिनकर।

यह प्रक्रिया पहले वस्तुओं की छोटी संख्याओं, फिर बड़ी संख्याओं के साथ हो सकती है।





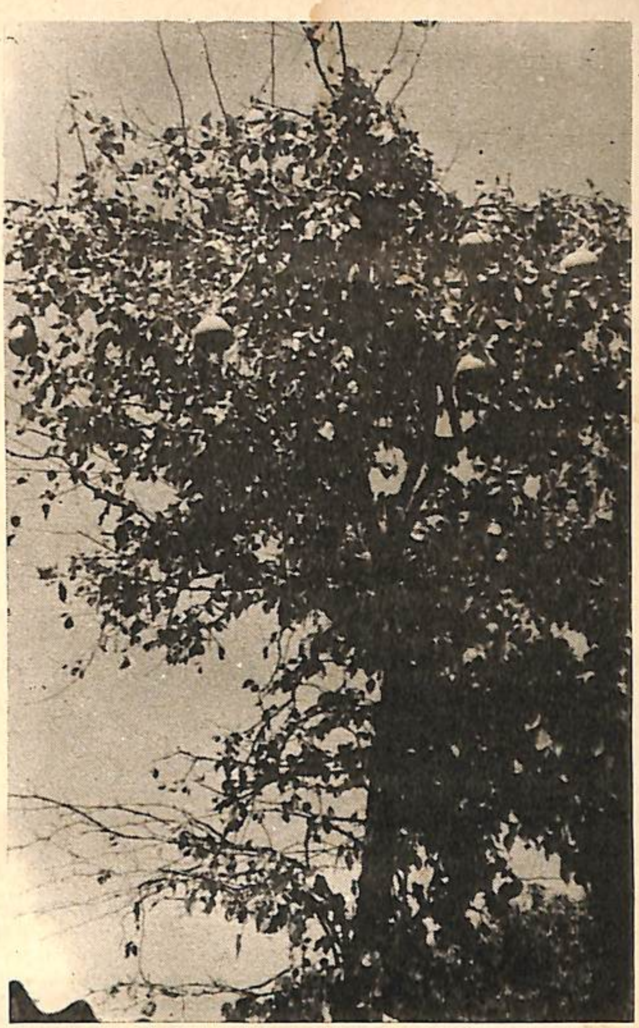
शिक्षकों को बच्चों की क्षमतानुसार सामग्री प्रस्तुत करना और अवधारणाओं को दृढ़ बनाने के लिए उसको अलग रूपों और बढ़ती जटिलता के साथ पेश करना चाहिए।

परीक्षण के लिए जिस अवधारणा का उपयोग हो वह बच्चे को समझ आना चाहिए।

मेल बैठाने और गिनती का सम्बंध भी इस प्रक्रिया द्वारा समझाया जा सकता है।

❑ दीप्ति वैद्य
इन्डस्ट्रियल डिज़ाइन सेन्टर, बम्बई

बेल



बेल-पत्र के बारे में तुमने सुना ही होगा। बेल देशी पेड़ है और भारत में लगभग सभी जगहों पर पाया जाता है। यह हर तरह की ज़मीन पर उग सकता है। यहाँ तक कि दक्षिणी हिमालय में यह लगभग डेढ़ हजार मीटर की ऊँचाई पर भी मिलता है। बेल के पेड़ के जंगल भी होते हैं।

बेल का पेड़ पन्द्रह मीटर से भी अधिक ऊँचा हो सकता है। इसकी शाखाओं पर तीखे काँटे होते हैं। शाखाओं पर जहाँ से पत्ते निकलते हैं, वहीं से एक काँटा भी निकलता है। पत्ते तीन के समूह में होते हैं। मई-जून में पत्ते झड़ जाते हैं और इसके बाद नए पत्ते आने लगते हैं। जुलाई तक पेड़ पत्तों से भर जाता है। इसके बाद फूल आते हैं। फूल बड़े सफ़ेद और भीनी-सी सुगन्ध वाले होते हैं।

बेल-फल गोल और बड़े होते हैं। कोई-कोई फल तो बहुत बड़े हो जाते हैं। ये फल मज़बूत टहनियों पर लगते हैं। फल का ऊपरी भाग यानी छिलका बहुत कड़क होता है। इस छिलके को पक्षी अपनी चोंच से तोड़ नहीं पाते। कच्चे फल का रंग हरा होता है और पक जाने पर भूरा-पीला हो जाता है। फल पकने में लगभग पूरा साल लग जाता है। पके हुए फल के अन्दर गूदा नारंगी रंग का होता है। यह बहुत मीठा होता है। फल का छिलका तोड़कर गूदा निकालें तो वहाँ रेशे भी दिखाई देंगे। फल वैसे ही खाया जाता है साथ ही इससे कई तरह की चीजें बनाकर भी खाई जाती हैं।

बेल के पेड़ की कई क़िस्में पाई जाती हैं। सबसे अच्छी किस्म वो मानी जाती है जिसका फल बड़ा और छिलका पतला होता है। इसका गूदा बहुत स्वादिष्ट होता है। इस क़िस्म के पेड़ उत्तर बिहार में ज्यादा पाए जाते हैं। दूसरी क़िस्म है कड़े छिलके वाले छोटे फलों की। इस क़िस्म के पेड़ में फल ज्यादा संख्या में लगते हैं। इसे कठबेल या जंगली बेल भी कहते हैं।

बेल के पेड़ में तने की लकड़ी की चौड़ाई या गोलाई बहुत ज्यादा नहीं होती। तो भी बैलगाड़ी बनाने में यह लकड़ी उपयोगी है। इस पेड़ का लगभग हर भाग किसी न किसी काम में आता ही है। बीज से एक तरह का पीला-सा तेल निकाला जाता है। पेड़ की छाल, जड़ें, पत्ते, फल सभी कई तरह की दवाईयाँ बनाने में काम में लाए जाते हैं। बेल-पत्र लगभग सारे उत्तरी भारत में पूजा में जरूरी माना जाता है। सावन के महीने में जब पेड़ पर पत्तों की भरमार होती है तब इसकी पत्तियों से पूजा करने का खास प्रचलन है।

इसे अंग्रेजी में (Bengal Quince) कहते हैं।

□□□

अनोखा जीव

❑ सत्यजीत राय

***पिछले अंक में तुमने पढ़ाः* प्रोफ़ेसर शंकु पिछले कुछ दिनों से अपनी प्रयोगशाला में कृत्रिम जीवन का निर्माण करने की कोशिश कर रहे थे। इसी बीच उनकी मुलाकात प्रोफ़ेसर हमबोल्ट से हुई। हमबोल्ट भी ऐसे ही किसी प्रयोग में लगा था। हमबोल्ट ने प्रस्ताव रखा कि क्यों न प्रोफ़ेसर शंकु उसकी प्रयोगशाला में आकर काम करे। प्रो. शंकु ने इसे स्वीकार कर लिया।**

प्रयोग शुरू हुआ। करोड़ों साल पहले पृथ्वी पर जब पहली बार जीवन या जीवित कोशिका दिखाई दी थी, तब जैसी परिस्थितियाँ थीं वैसी ही कृत्रिम परिस्थितियाँ उन्होंने एक फ़्लास्क में पैदा कीं। दो दिन बाद उन्होंने पाया कि फ़्लास्क में जीवन के लक्षण नज़र आने लगे हैं। अब आगे पढ़ो....

15 मार्च

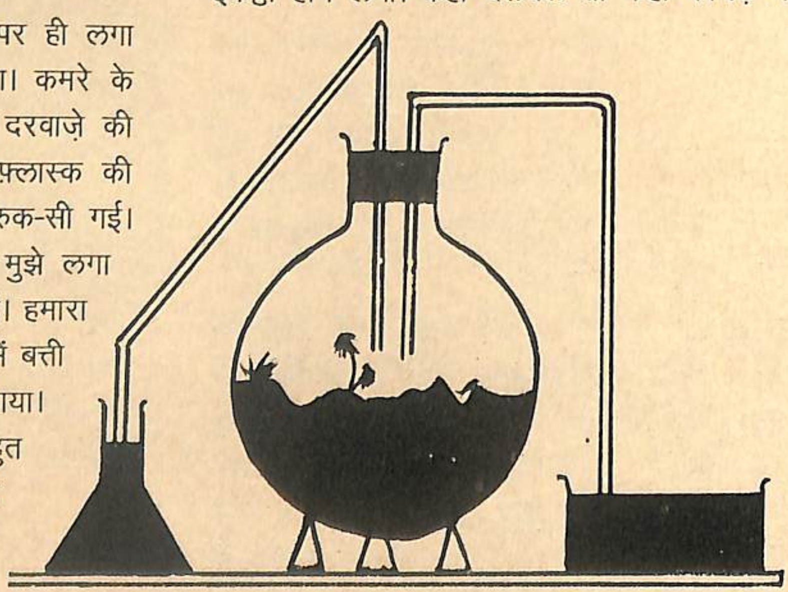
मेरा सिर चकरा रहा है। और अब अपने आप को वैज्ञानिक कहने को भी मेरा जी नहीं करता। आज जो कुछ इस प्रयोगशाला में हुआ उसे तो जादू मान लेने को ही मन करता है। कल रात मैं कोई तीन बजे तक जगता रहा। फिर भी आदतन सुबह पाँच बजे उठ गया। हमबोल्ट भी सुबह जल्दी ही उठता है पर छः बजे से पहले नहीं।

मन तो प्रयोगशाला के फ़्लास्क पर ही लगा हुआ था। सो उठते ही सीधे वहीं गया। कमरे के खिड़की-दरवाज़े बन्द थे पर मेरे पास दरवाज़े की एक चाभी थी। अन्दर घुसते ही मैंने फ़्लास्क की ओर देखा और मेरे दिल की धड़कन रुक-सी गई। वो नीली आभा वाला जीव ग़ायब था। मुझे लगा कि इतने दिनों की मेहनत ख़राब हो गई। हमारा बनाया हुआ जीव विलुप्त हो गया। फिर मैं बत्ती जलाकर डरते-डरते फ़्लास्क के पास आया। और देखता क्या हूँ कि फ़्लास्क में बहुत कम ही तरल बचा था। लगभग आधी जगह पर भूरे रंग की कोई चीज़ थी। सतह सपाट थी और कहीं-कहीं पानी के छोटे-छोटे पोखर से बने थे। इन पोखरों के किनारे कुछ हरे-से थे। यानी कि फ़्लास्क का महासागर अब दलदली जमीन में बदल गया था। पर हमारे जीव का क्या हुआ?

फिर ध्यान से देखने पर मैंने देखा कि एक पोखर में कुछ हलचल थी; कुछ हिल रहा था। मैंने पास जाकर उस पर नजरें जमाईं। कोई छोटा-सा जीव पानी में तैर रहा था जिससे पानी में हलचल थी। और अब वह पोखर के एक किनारे से ज़मीन पर चढ़ रहा था। चींटी जितना बड़ा यह जानवर ख़ाली आँखों से आसानी से देखा जा सकता था।

एक पल को बिना सोचे ही मैंने जोर से कहा, ''एम्फीबियन!'' यानी हमारे बनाए हुए जलचर जीव का विकास हो गया था और विकास के क्रम में यह पानी और जमीन, दोनों पर रहने वाला जानवर बन गया था।

वैज्ञानिकों ने अध्ययन और अनुमान दोनों के जोड़-तोड़ से यह निष्कर्ष निकाला है कि शुरू में पृथ्वी पर जलचर जीव रहते थे। फिर पृथ्वी पर परिस्थितियाँ बदल गईं। ज़मीन पर कहीं-कहीं पानी इकट्ठा होने लगा। कहीं दलदल तो कहीं कीचड़ में



जंगल। ऐसे में जलचर जीवों को इन नई परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। धीरे-धीरे उनमें इन परिस्थितियों के ही अनुसार बदलाव आते गए और उसने जो नया रूप लिया वह एक ऐसे जीव का था जो पानी और जमीन दोनों पर रह सकता था। यह सब होने में लाखों-करोड़ों साल लग गए होंगे। पर यही विकास का क्रम हमारे प्रयोग के फ्लास्क में कुछ ही दिनों में हो गया था।

मैं मेज के पास खड़ा यही सब सोच रहा था। अचानक मैंने देखा कि हमारे जीव ने हिलना-डुलना बन्द कर दिया था। मैंने सुपर सूक्ष्मदर्शी को आँखों से लगाया और उस जीव को देखकर दंग रह गया। मैंने बर्लिन के संग्रहालय में ठीक इसी तरह के जीव का फ़ॉसिल देखा था। लाखों करोड़ों साल पहले पत्थर पर छोड़ी गई छाप। वह छाप करीब 60 करोड़ साल पहले उस जीव के पत्थर की परतों के बीच दबने से पड़ी होगी। छिपकली और मछली के बीच का जीव दिखता था वह। फॉसिल में तो कुछ भी बहुत स्पष्ट नहीं होता पर अब फ्लास्क में मैं देख सकता था कि वह हरे-भूरे-से रंग का था।

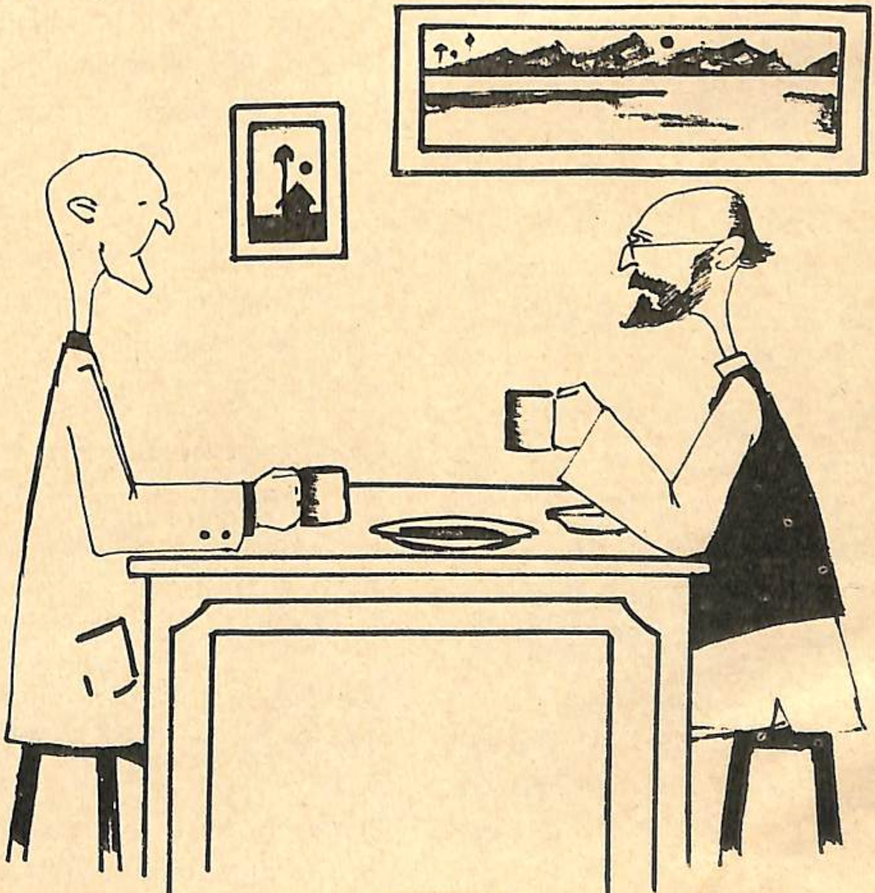
ध्यान से देखने पर एक और चीज दिखी मुझे। पोखरों के हरे किनारे दरअसल पेड़-पौधे थे- झाड़ियाँ और बेलें।

हमबोल्ट शायद रात देर तक लिखता रहा होगा इसलिए सुबह वह साढ़े सात बजे उठा। और फ्लास्क में हुए जादूनुमा बदलाव को वह भी मेरी ही तरह मंत्रमुग्ध-सा देखता रहा।

नाश्ता करते हुए हमबोल्ट ने कहा, ''क्या तुम्हें लगता है कि हमारे फ़्लास्क में जीव के विकास का ही कोई छोटा रूप दिखाई दे रहा है?''

मैंने भी यही अंदाजा लगाया था। ''सिर्फ़ आज का अनुभव ही पर्याप्त प्रमाण नहीं,'' मैंने कहा। ''आगे क्या होता है, इस पर बहुत कुछ निर्भर करेगा।''

''हाँ,'' कहकर हमबोल्ट कुछ देर चुप रहा। उसके चेहरे पर एक अजीब-सी मुस्कान थी। हमारे जीव के बनने के बाद से ही मैंने गौर किया था कि वह इस तरह मुस्करा रहा था। उसने ब्रेड का एक टुकड़ा मुँह में भरकर कहा, ''इस हिसाब से अगला क्रम शाकाहारी सरीसृप का होगा और उसके बाद



मांसाहारी स्तनधारी का और फिर....और फिर....''

इतना कहकर वह चुप हो गया। चम्मच नीचे रखकर वह अपने दोनों हाथ जोर-जोर से मलने लगा और फिर बोला, ''सत्रह साल पहले की बात है। मैंने ओसाका के एक अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान सम्मेलन में कृत्रिम रूप से जीवन निर्माण पर एक पर्चा पढ़ा था। मेरा पर्चा सुनने के बाद वहाँ सब मेरी हँसी उड़ाने लगे थे। उन्हें लगा था कि मैं पागल हूँ। इससे भी बुरा यह कि कुछ लोगों ने मुझ पर आरोप लगाए कि मैं एक झूठा वैज्ञानिक हूँ। मन करता है कि उन सबको आज यहाँ पकड़ लाऊँ और उन्हें दिखाऊँ कि मैंने क्या कमाल किया है।''

मैं चुप रहा। मैंने ग़ौर किया कि हमबोल्ट बिना किसी झिझक के जीवन निर्माण का पूरा श्रेय ख़ुद ले रहा था। अगर समय पर मुझे अचानक विद्युत तरंगें बढ़ाने की बात नहीं सूझती तो यह प्रयोग असफल ही रहता। यह सही है कि मूल शोधकार्य हमबोल्ट के निर्देशों के अनुसार ही हो रहा था, पर वह काम का नहीं था। हमबोल्ट को ये सारी बातें मालूम हैं, फिर भी.... ख़ैर, क्या फर्क पड़ता है। मैंने पहले भी वैज्ञानिकों में ऐसी मानसिकता देखी है। आखिर वे भी तो इन्सान ही हैं। इसलिए उनमें भी ईर्ष्या, लोभ, सभी कुछ होता है।

बाहर मौसम अच्छा था और मैं कई दिनों से एक ही जगह फँसा हुआ था, सो मैंने सैर पर जाने का तय किया। मुझे कुछ ख़त लिखने थे इसलिए मैं डाक-टिकट लेने सीधे डाकघर गया।

सड़कों पर बर्फ गिरी हुई थी और काफी ठण्ड थी। पर मेरी जेब में एक ऐसी गोली थी जिससे मुझ पर इस सबका कोई असर नहीं पड़ता था। यह गोली मेरा वातानुकूलन कर देती थी। इसलिए मेरा काम साधारण कपड़े से ही चल जाता था। सड़कों पर लोग गरम कपड़ों से लदे हुए घूम रहे थे और मुझे मुड़-मुड़कर देखते जाते थे।

डाकटिकट खरीदते हुए मुझे ख्याल आया कि मैं वहीं से लंदन फोन करके अपने मित्र सोमरविल से बात भी कर सकता था। थोड़ी देर मैं सोचता रहा कि क्या मुझे सोमरविल से सीधे सम्पर्क करके पिछले दिनों घट रही घटनाओं के बारे में बताना चाहिए? सोमरविल एक बायोकेमिस्ट भी था और बहुत समय पहले एक बार मैंने उससे कृत्रिम जीवन और जीवों के बारे में ख़तों में चर्चा की थी।

उससे सम्पर्क करने में सिर्फ़ एक मिनट लगा। मैंने जैसे-तैसे संक्षेप में उसे सारी बातें समझाईं। उसे तो जैसे मेरी बातों पर यकीन ही नहीं हो रहा था; कि कृत्रिम रूप से जीव बना पाए थे हम। और फिर हमारे जीव ने जलचर से जल और थल दोनों में रहने वाली स्थिति सिर्फ़ दो दिन में हासिल कर ली थी? अन्त में सोमरविल ने पूछा, ''तुम बोल कहाँ से रहे हो....निश्चित ही भारत से नहीं?''

''नहीं, नहीं,'' मैंने कहा, ''मैं उतनी दूर नहीं हूँ। मैं तो सेंट गैलेन में हूँ।''

''सेंट गैलेन, क्यों?'' सोमरविल को आश्चर्य हुआ।

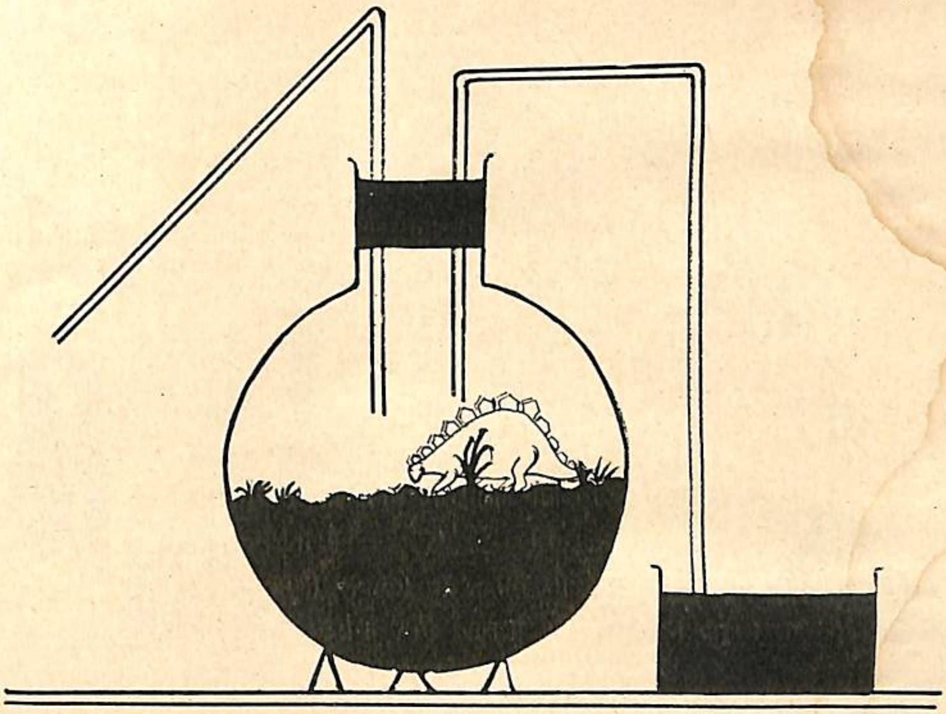
''मैं प्रोफेसर हमबोल्ट की प्रयोगशाला में काम कर रहा हूँ'' मैंने कहा।

थोड़ी देर चुप्पी रही। फिर मुझे सुनाई दिया, ''हमबोल्ट? कोर्नेलियस हमबोल्ट?.....पर यह तो वह है जो....'' और लाइन कट गई।

मैंने पूरे एक मिनट तक फिर से फोन लगाने की कोशिश की पर नहीं लगा। मैं सोमरविल के आख़िरी शब्द सुन तो नहीं पाया पर यह साफ़ था कि मेरे सहकर्मी का नाम सुनकर वह कुछ परेशान-सा हो गया था।

मैं करता भी तो क्या, घर लौट आया। यह तो मुझे भी मालूम था कि हमबोल्ट बहुत सीधा इन्सान नहीं था पर मुझे यह भी ख़्याल था कि उसने मुझे अपनी इतनी बढ़िया प्रयोगशाला में काम करने का मौका दिया था।

हमबोल्ट और मैंने लगभग पूरा दिन प्रयोगशाला में ही बिताया। हमने अति-सूक्ष्म कैमरे से उस जीव की कुछ तस्वीरें भी खींचीं। ऐसा लग रहा है कि यह जीव ठीक-ठाक जीवित बच जाएगा। फ्लास्क के अन्दर अपने-आप ही उसके अनुकूल प्राकृतिक वातावरण बनता जा रहा है। अगर उससे



कोई छेड़खानी न की जाए तो यह जीव बच जाएगा

16 मार्च

बिल्कुल वही हुआ जिसकी हमें उम्मीद थी। आज जीव ने जो रूप लिया है, वह एक सरीसृप का है। यह हमारे जीव के विकास की तीसरी अवस्था है। उसका आकार भी कोई दस गुना बढ़ गया है। उसे देखने के लिए अब अति-सूक्ष्मदर्शी की जरूरत नहीं पड़ती। उसका रूप और स्वभाव आसानी से देखा जा सकता है। यह जीव कुछ पहचाना-सा लगता है क्योंकि दुनिया के कई संग्रहालयों में इसके कंकाल देखे जा सकते हैं। विकास की इस अवस्था का यह सबसे बड़ा जीव था - बॉन्टोसौरस। उसी साठ फुट ऊँचे आदि-जीव का दो इंच बराबर यह प्रतिरूप अब हमारे फ़्लास्क में उठता-बैठता, घूमता, सोता और भूख लगने पर हरियाली चबाता रहता है।

मुझे बहुत पछतावा हो रहा है कि कल रात मैं जागकर उस जीव को देखता क्यों नहीं रहा। अगर मैं ऐसा करता तो यह बदलाव अपनी आँखों से देख पाता। आज तो मैंने तय कर लिया है कि जब तक फ़्लास्क में कुछ हो नहीं जाता, मैं प्रयोगशाला से हिलूँगा नहीं।

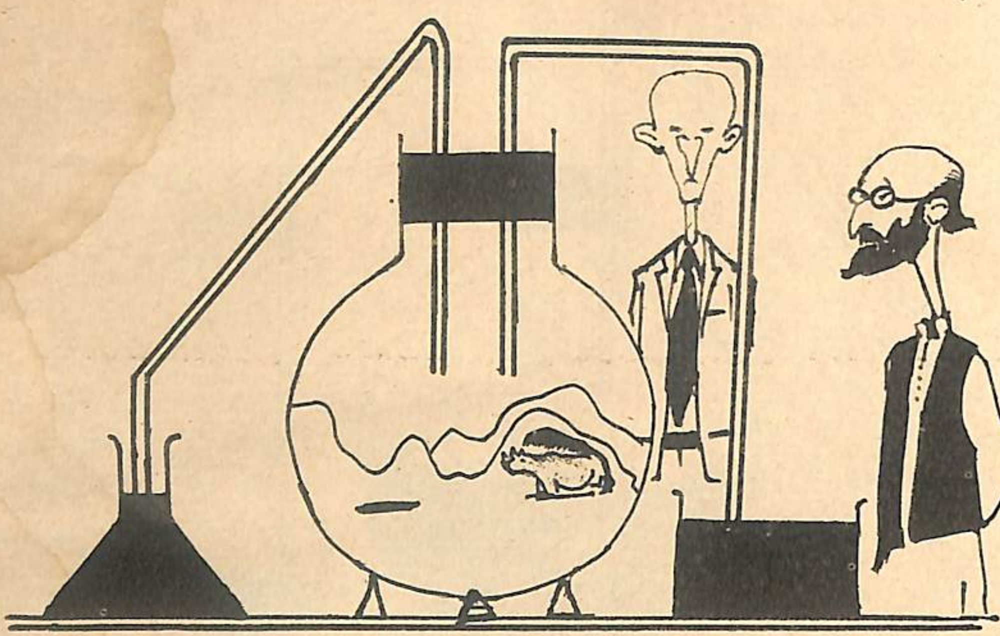
अभी रात के सवा बारह बजे हैं और मैं प्रयोगशाला में बैठकर ही अपनी डायरी लिख रहा हूँ। हमबोल्ट भी यहीं है। वह सिर्फ़ एक बार टेलीफोन सुनने बाहर गया था। पता नहीं वह किससे बात कर रहा था। पर उसकी तेज़ आवाज़ से इतना तो पता चलता है कि वह किसी से बहुत उत्तेजित और खुश होकर बात कर रहा था। दूर से मुझे शब्द स्पष्ट सुनाई नहीं दिए।

अभी बॉन्टोसौरस आराम कर रहा है। फ़्लास्क के अन्दर कुछ धुंधला-सा होने लगा है। या फिर शायद कुछ होने वाला है। मैं अभी यहीं रुकता हूँ।

16 मार्च, रात 1.36 पर

दो मिनट पहले यह आश्चर्यजनक घटना घटी। मैंने जिस धुंधलाहट की बात की थी वो बादलों के कारण ही थी। बादल बनने के कुछ मिनट बाद ही मुझे हल्की-हल्की भाप-सी कुछ गिरती हुई दिखी। हमारे फ़्लास्क की जमीन पर बारिश गिर रही थी।

सिर्फ बारिश ही नहीं, मैंने बिजली चमकते हुए भी देखी और गड़गड़ाहट भी सुनी। बादलों की गड़गड़ाहट मेरे लिए तो बहुत तेज़ नहीं थी पर फिर भी उसके कारण मेज़ और उस पर रखा काँच का



सामान काँपने लगा। बारिश के कारण फ़्लास्क के अन्दर कुछ भी साफ़-साफ़ नहीं दिखता था। हमारा जीव भी नहीं।

हम दोनों मंत्रमुग्ध से खड़े रहे। तब तक जब तक कि बरसात रुक नहीं गई। बादल छट गए और फ्लास्क के अन्दर का वातावरण फिर साफ़ होने लगा। अन्दर की ज़मीन का रंग भी बिल्कुल बदल गया था। जो पहले तांबई रंग था अब वह झक सफ़ेद हो गया था। हम दोनों ने उत्तेजना से कहा, ''बर्फ़!''

ज़मीन अब सपाट नहीं थी। उसमें ऊँचे-नीचे पहाड़-टीले-गड्ढे बन गए थे। कहीं-कहीं तो बर्फ़ बिल्कुल पहाड़ की चोटी की शक्ल में जम गई थी।

मैंने कहा, ''क्या हम हिम-युग का कोई दृश्य देख रहे हैं?"

हमबोल्ट ने कहा, ''शायद। या फिर यह किसी भी समय में पृथ्वी के ध्रुवों का दृश्य हो सकता है।''

हिम-युग आज से कोई सात या आठ लाख साल पहले हुआ था। उस समय ध्रुवीय क्षेत्रों से बहकर बर्फ़ की चट्टानों ने सारी पृथ्वी को ढक दिया था।

अचानक हमबोल्ट ने कहा, ''वह रहा,...वह रहा हमारा जीव।'' एक बर्फ़ की गुफा से एक जानवर निकला। वह कोई एक इंच भर का होगा और चुपचाप एक जगह खड़ा था। हमबोल्ट ने अतिसूक्ष्मदर्शी से देखते हुए कहा, ''अब मुझे समझ आ रहा है। साफ़ देख पा रहा हूँ पैर छोटे-छोटे हैं, उसके माथे से दो छोटे-से सींग निकले हुए हैं और गर्दन छोटी-सी है। यह बालों वाला रायनोसौरस (गेंडा) है, हमारा स्तनधारी।"

मैंने हमबोल्ट से सूक्ष्मदर्शी लेकर देखा। वह सही था। हमारे जीव ने एक आदि-गेंडे का रूप लिया था जिसे ''वूली रायनोसौरस'' कहा जाता है। वह जीव बर्फ़ीले इलाकों में ही रहता था।

फ्लास्क में जीवन का विकास सही दिशा में हो रहा था। पर सबसे संतोषजनक बात यह है कि आज के परिवर्तन हम अपनी आँखों से देख पाए। लगातार सोलह घंटों तक प्रयोगशाला में डटे रहने का सही इनाम हमें मिला है।

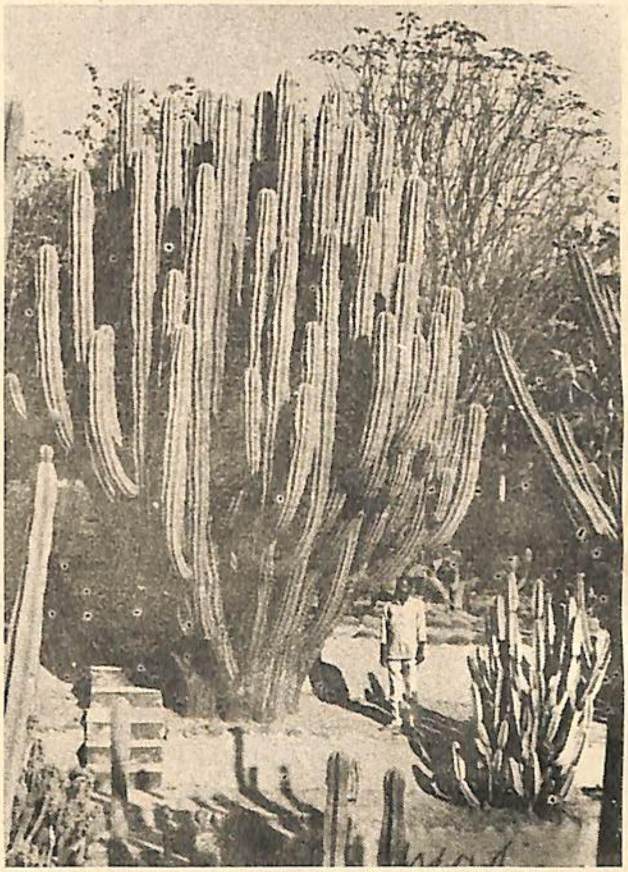
मैं कल सुबह सोमरविल को फिर फोन करके उसे यहाँ बुला लूँगा। यह ठीक नहीं है कि इतनी बढ़िया घटनाएँ सिर्फ़ दो वैज्ञानिकों के सामने हों।

(अगले अंक में जारी)

❑ **अंग्रेज़ी से अनुवाद : दुलदुल विश्वास**
सभी चित्र : देवाशीष पाल

सैलाना का

कैक्टस गार्डन



सैलाना के कैक्टस गार्डन का यह कैक्टस इस गार्डन की पहचान है। इसे गार्डन का 'ओल्डमेन' कहा जाता है।

किसी बगीचे की बात होती है तो दिमाग़ में एक ऐसा चित्र उभरता है जहाँ हरे-भरे पत्तों से लदे पेड़-पौधे हों, उनमें रंग-बिरंगे फूल लगे हों। लेकिन तुम्हें एक ऐसे बगीचे के बारे में बताते हैं जहाँ काँटे ही काँटे हैं। हमारा मतलब है कैक्टस ही कैक्टस हैं। कैक्टस आमतौर पर दुखों का प्रतीक समझे जाते हैं, पर हम जिन कैक्टस की बात कर रहे हैं, उनको लगाने वाले को कैक्टस देखकर बड़ा सुख मिलता था।

दरअसल हम जिस कैक्टस गार्डन की बात कर रहे हैं वह मध्यप्रदेश के रतलाम ज़िला मुख्यालय से बीस किलोमीटर की दूरी पर स्थित सैलाना नामक कस्बे में है। सैलाना के इस कैक्टस गार्डन के बारे में सुन रखा था कि यह अपने कैक्टस के लिए एशिया भर में प्रसिद्ध है।

जब हम इसे देखने पहुँचे तो इसके बारे में हमें बगीचे की देखभाल करने वाले निर्मल भाई ने विस्तार से बताया।

इस कैक्टस गार्डन को लगाने का श्रेय सैलाना स्टेट के भूतपूर्व महाराजा स्वर्गीय दिग्विजय सिंह को जाता है। उन्हें बगीचे लगाने का बहुत शौक था। वे अपने बगीचे में तरह-तरह के पौधे लगाते थे और खुद उनकी देखभाल भी करते थे। उन्होंने काले गुलाब का भी एक बगीचा बनाया था। तीस-पैंतीस साल पहले दिग्विजय सिंह जर्मनी की यात्रा पर गए। वहाँ उन्होंने कैक्टस के अनेक नमूने देखे। वे उनसे बहुत प्रभावित हुए और सोचने लगे कि क्यों न सैलाना में कैक्टस का एक बगीचा ही बनाया जाए। बस फिर क्या था। जर्मनी से लौटते समय वे अपने साथ कैक्टस के रोपे और बीज लेते आए। और कैक्टस गार्डन की तैयारी शुरू कर दी।

सैलाना में आज जिस जगह पर कैक्टस गार्डन है वहाँ कभी टेनिस का मैदान हुआ करता था। लेकिन दिग्विजय सिंह के इरादे ने उसे कैक्टस गार्डन में बदल दिया।

यह बात ग़ौर-तलब है कि दिग्विजय सिंह कैक्टस के बारे में ज्यादा नहीं जानते थे। लेकिन दिलचस्पी के कारण उन्होंने न केवल कैक्टस पर



कद्दू *जैसे आकार का कैक्टस।*



मटके *के आकार का कैक्टस।*

जानकारी एकत्रित की बल्कि एक माली की तरह कैक्टस गार्डन में काम किया। उन्होंने एक रजिस्टर बनाया था जिसमें हरेक कैक्टस के बारे में विस्तार से अपने अवलोकन लिखते थे। मसलन कब बोया? कब-कब कितना पानी दिया? कब खाद डाली? कब फूल आए? कौन-सी बीमारी लगती है? आदि।

हमने वहाँ जितने भी कैक्टस देखे, सभी में काँटे थे। और हर कैक्टस अनोखा। कोई कद्दू जैसा, तो कोई मटके जैसा? तो कोई नाग के फन जैसा! किसी में एकदम महीन काँटे तो किसी में भालेदार नोक वाले। कुछ पाव वज़न के तो कुछ क्विंटलों के। यहाँ हमने पाँच सेन्टीमीटर से लगाकर दस-बारह मीटर तक के ऊँचे कैक्टस भी देखे।

इस कैक्टस गार्डन में एक नर्सरी भी है। जहाँ कैक्टस के नए पौधे तैयार किए जाते हैं। कैक्टस के बीजों को छोटे गमलों में बोया जाता है और उनसे कैक्टस के पौधे तैयार हो जाने पर उनको बड़े गमले में रोपा जाता है। निर्मल भाई बताते हैं कि कैक्टस के बीजों का अंकुरण बहुत धीमी गति से होता है। अंकुरण के बाद पौधों की बढ़त भी धीमी ही होती है। कैक्टस के पौधे तैयार करने का एक तरीका यह है कि किसी कैक्टस के टुकड़े को गमले में लगा दिया जाए। कुछ समय बाद यह टुकड़ा एक नए पौधे के रूप में पनपने लगता है। निर्मल भाई बताते हैं कि कैक्टस कम से कम पानी से भी कई महिनों तक ज़िन्दा बने रहते हैं। पर यदि इनको ज़्यादा पानी दिया जाए तो इनकी बढ़त रुक जाती है। इसलिए इन पौधों को पानी हिसाब से ही दिया जाता है। जैसे गर्मी में सप्ताह में एक बार ठण्ड में महीने में एक बार।

एक अनुमान के अनुसार यहाँ एक हज़ार से भी ज़्यादा तरह के कैक्टस हैं। यहाँ देशी कैक्टस की लगभग सभी प्रजातियाँ हैं। इसके अलावा बर्लिन, जापान, मैक्सिको, लन्दन, पेईचिंग, नेपाल आदि देशों से भी कैक्टस के बीज तथा रोपे लाकर इस कैक्टस गार्डन में लगाए गए हैं।

कैक्टस में काँटे होते हैं। मगर कैक्टस के फूलों को देखकर कोई भी उदास नहीं रह सकता। ज़्यादातर कैक्टस में आमतौर पर ग्रीष्म ऋतु में फूल आते है। बगीचे में जितने तरह के कैक्टस हैं उतने तरह के फूल। कुछ कैक्टस ऐसे हैं जिनके फूल चन्द्रमा की रोशनी में खिलते हैं, और कुछ ऐसे भी कि जो बरसात की रात में खिलते हैं।

कैक्टस का यह अनोखा गार्डन फिल्म इंडस्ट्री के लोगों की नज़र में भी चढ़ गया। यहाँ दो-तीन मशहूर फ़िल्मों की शूटिंग हुई हैं। लेकिन ऐसी एक शूटिंग के दौरान शूटिंग देखने के लिए आसपास की जनता उमड़ पड़ी। इस भीड़ के कारण बगीचे को भारी नुकसान पहुँचा और काले गुलाब का बगीचा तो उजड़ ही गया! यह सब देखकर दिग्विजय सिंह हतप्रभ रह गए। तभी उन्होंने तय किया कि आगे से बगीचे में किसी फ़िल्म की कोई शूटिंग वग़ैरह नहीं करने दी जाएगी।

तो यह था सैलाना के कैक्टस गार्डन का आँखों देखा हाल। तुम्हें कभी मौका मिले तो ज़रूर देखना।

❑ के.आर. शर्मा

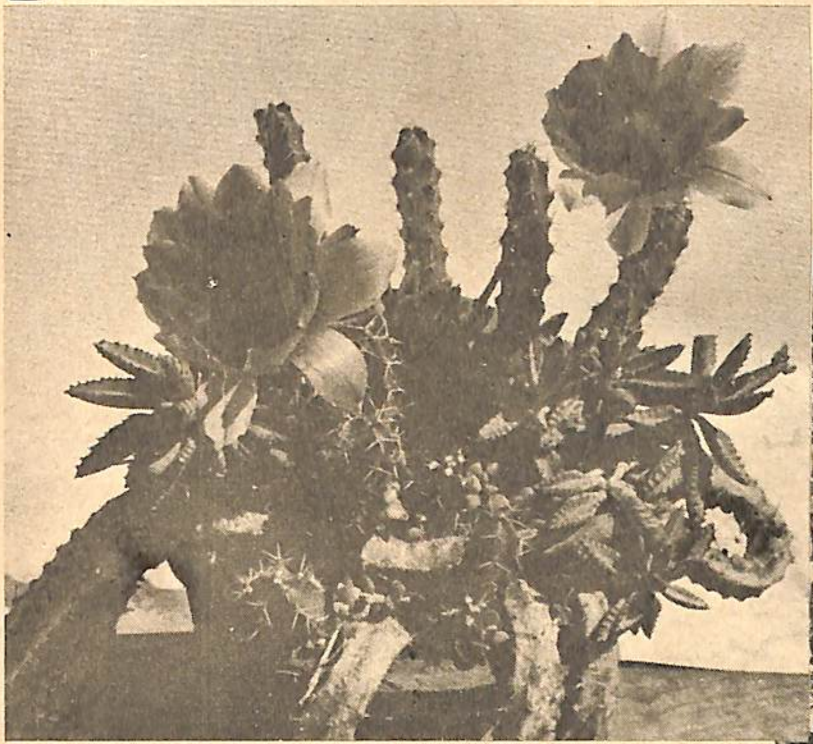
सभी फोटो : के.आर. शर्मा

सैलाना के कैक्टस गार्डन की तो बात ही अलग है। पर भोपाल में भी एक छोटा मगर कैक्टसों तथा अन्य पौधों से भरा बगीचा है। यहाँ दे रहे हैं श्री जे.जी. सावलकर (मामाजी) के बगीचे से खींचे गए कुछ चित्र।

1


2


1. **'सुनहरी गेंद'** नामक इस कैक्टस में मई-जून व सितम्बर में फूल आते हैं।
2. **'पादरी की टोपी'**
3. **पीले** फूलों वाला 'प्रिकली पीयर'।
4. **इस** कैक्टस का प्रचलित नाम 'चूहे की पूँछ' है। इसमें मई में गुलाबी रंग के फूल लगते हैं।

4


3

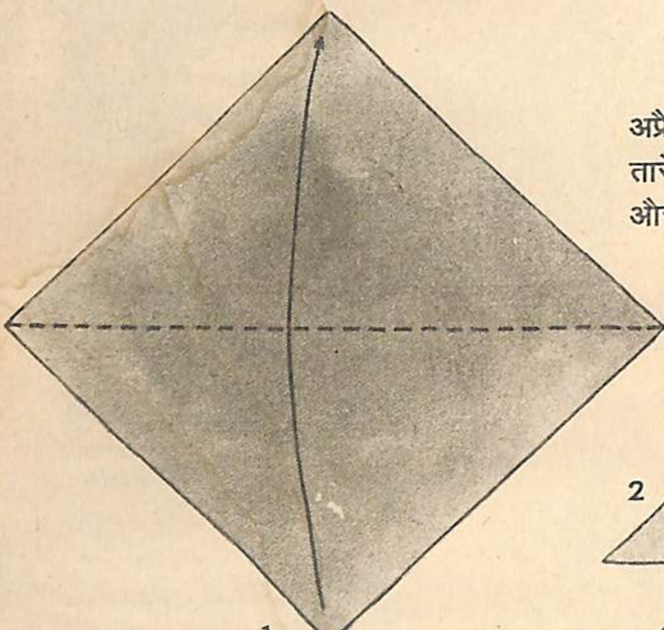



अपने बगीचे में पौधों की देखभाल करते हुए सावलकर जी।

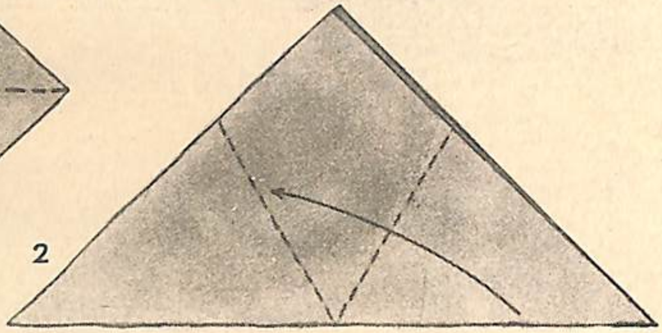
खेल काग़ज़ का

तारे ही तारे

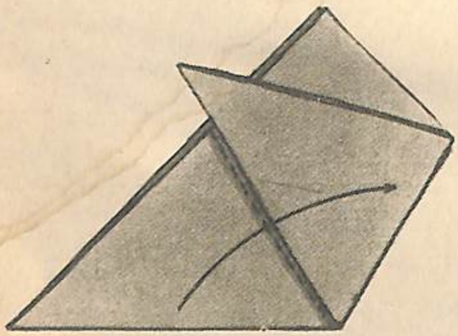
अप्रैल अंक में तुमने चार कोनों और आठ कोनों वाले तारे बनाए थे। उसी क्रम में अब छः कोने वाला तारा और उसी की कुछ डिज़ाइन बनाएँगे।



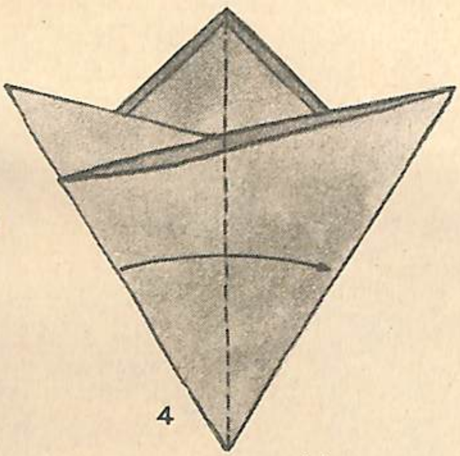
1



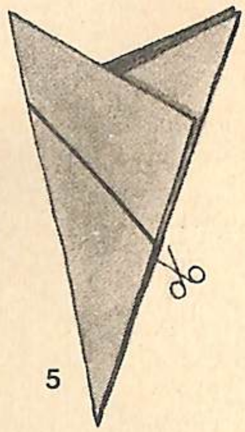
2



3



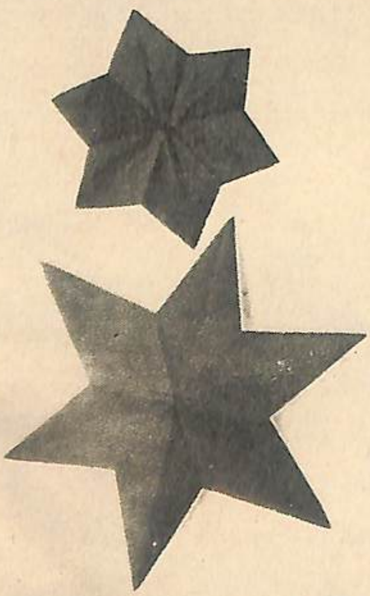
4



5

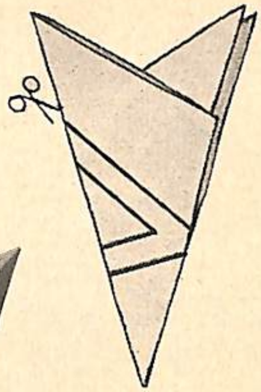


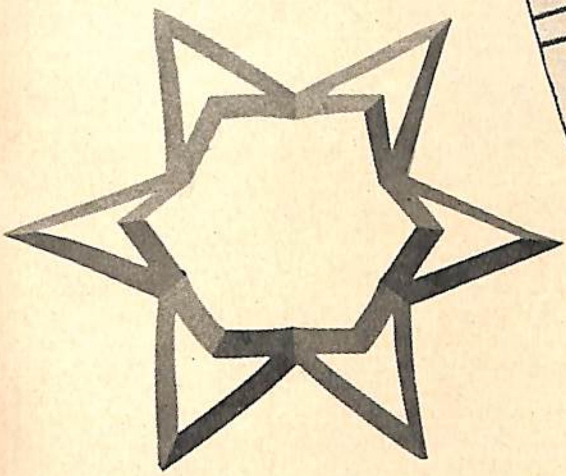
6



छह कोने वाला तारा

1. एक वर्गाकार काग़ज़ लो। इसे टूटी हुई रेखा पर से तीर की दिशा में मोड़ लो।
2. अब इस चित्र में दिखाई दे रही दाईं ओर की टूटी रेखा पर से आकृति को तीर की दिशा में मोड़ लो।
3. अब बाईं ओर के हिस्से को भी टूटी रेखा पर से तीर की दिशा में मोड़ लो।
4. ऐसी आकृति मिलेगी। अब बीचों-बीच दिखाई दे रही टूटी रेखा पर से तीर की दिशा में मोड़ लो।
5. बस अब कैंची के निशान से शुरू हो रही रेखा पर से काट लो।
6. आकृति के सारे मोड़ खोल लो।
7. यह बन गया छह कोने वाला तारा।



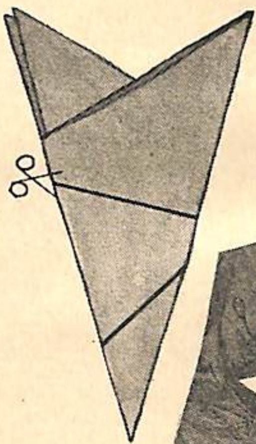


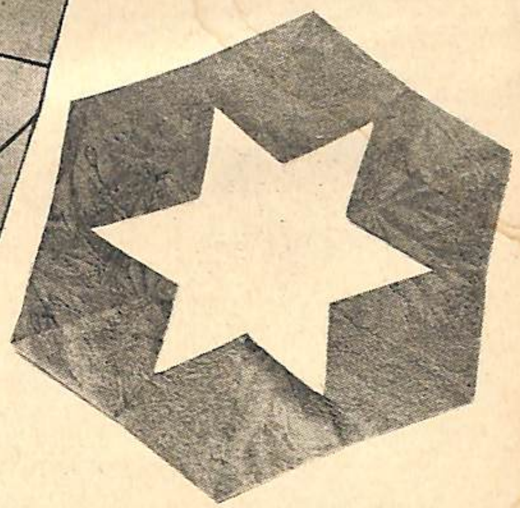
एक डिज़ाइन

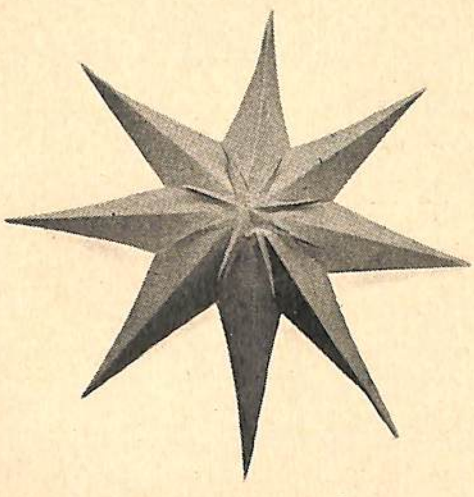
अब इसी छः कोने वाले तारे में एक डिज़ाइन बनाते हैं। इसके लिए छः क़ोने वाला तारा बनाने के लिए चित्र पाँच तक की क्रिया दोहरा लो। अब इसे काटने के लिए पहले आकृति पर इस चित्र के अनुसार निशान बना लो फिर कैंची से इन पर कट लगाओ। बस अब मोड़ खोल लो। बन गई न एक बढ़िया सी डिज़ाइन।

एक और डिज़ाइन

इसी छः कोनों वाले तारे से एक और डिज़ाइन बनाते हैं। एक कागज़ लेकर चित्र पाँच तक की सारी क्रियाएँ दोहरा लो। इसे काटने से पहले इस चित्र के अनुसार निशान बना लो फिर इसे काटो। अब सारे मोड़ खोल लो। ऐसी डिज़ाइन बन जाएगी।









एक और सुन्दर डिज़ाइन

यह एक आठ कोनों वाला तारा है। इसमें बीच में एक और तारा दिखाई दे रहा है। तुम्हें करना यह है कि आठ कोने वाला तारा बनाने के लिए जो कुछ तुमने पिछले अंक में पढ़ा था दोहरा लो। मोड़ खोलने से पहले इस चित्र में दिखाई दे रही रेखा पर कट लगा लो।

अब मोड़ खोलो। देखो एक साथ जुड़े हुए दो तारे मिल गए न। छः कोने वाले तारे में भी ऐसे जुड़े तारे बना सकते हो।



माथापच्ची

(1)

यहाँ एक घड़ी की चार स्थितियाँ दी हुई हैं।इन चारों में एक क्रम है। क्रम खोजकर पाँचवीं घड़ी में सुइयों की स्थिति क्या होगी, बताओ।



(2)

मीना के जन्म दिन पर उसके ढेर सारे दोस्त उसके घर गए। बातों बातों में यह तो पूछना भूल ही गए कि मीना की उम्र कितनी हो गई। रमेश ने पूछा मीना तुम्हारी उम्र कितनी हो गई है?

मीना ने कहा इस समय मेरी माँ की उम्र मेरी उम्र से दोगुनी है। 18 साल पहले वह तीन गुनी थी। अब तुम खुद पता कर लो कि मेरी उम्र क्या है?

(3)

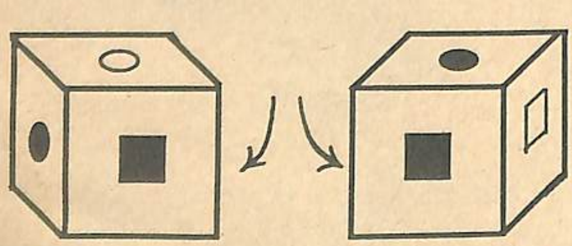
29 में से एक कम करने पर 30 बन सकता है पर कैसे? गणित में लिखने के एक ख़ास तरीके से। तुम सोचो और बताओ।

(4)

एक ग्वाले के पास 12 गाएँ थीं। सबकी गिनती के हिसाब से ही उसने उनके नाम रखे हुए थे। यानी 1 से 12। मज़ेदार बात यह कि सारी गाएँ दूध भी अपने नाम के हिसाब से देती थीं। 1 नं. गाय एक लीटर, 2 नं. दो लीटर, 3 नं. तीन लीटर ....।

ग्वाले की दो बेटियाँ और एक बेटा थे। बुढ़ापे में ग्वाले ने तय किया कि गायों को बच्चों में बराबर बाँट दिया जाए। पर उसकी यह भी ज़िद थी कि सभी को सिर्फ बराबर संख्या में गाय ही नहीं मिलें बल्कि उनसे मिलने वाले दूध की मात्रा भी बराबर हो। क्या तुम ग्वाले की मदद करोगे?

(5)



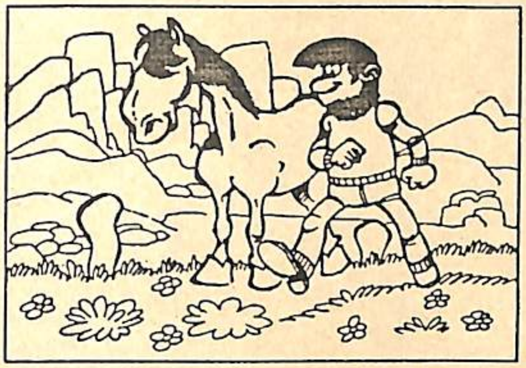
ये दोनों घन बिल्कुल एक जैसे हैं। और तीर से दिखाई गई सतहों पर दोनों में एक-सी आकृति बनी है।
कौन-सी आकृति है वह ● ○ ■ □

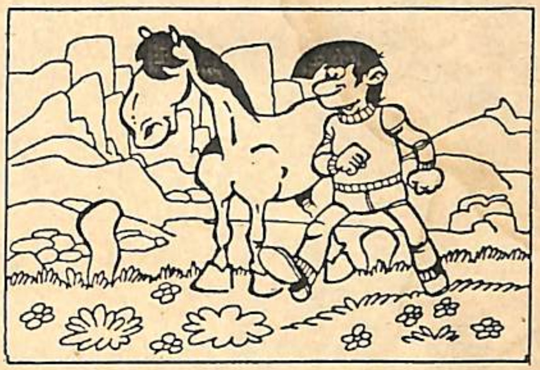
(6)

शाहीन और इला गोटियों से एक खेल खेल रहे थे। खेल में 6 गोटियाँ चित्र के हिसाब से सजी थीं। खेल यह था कि दोनों गोटियों को मेज़ पर से हटाते थे। शर्त यह थी कि एक बार में या तो सिर्फ एक गोटी ही हटा सकते थे या फिर किसी भी ढेर की सारी गोटियाँ। जिसे आख़िरी गोटी हटानी पड़े वह हार जाता था। पहली चाल चलने की बारी शाहीन की थी। और उसे यह बाज़ी जीतनी ही थी। क्या तुम उसे बता सकते हो कि कौन-सी चालें उसे यकीनन जिता देंगी?

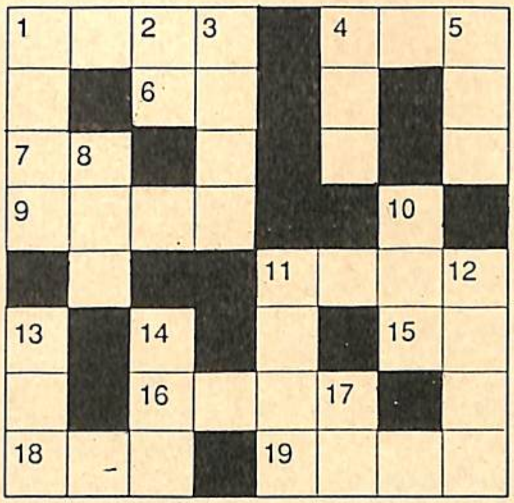
(7)

इन दो चित्रों में असमानताएँ ढूँढो। कितनी मिलीं लिखना।





वर्ग पहेली - 35



संकेत : बाएँ से दाएँ

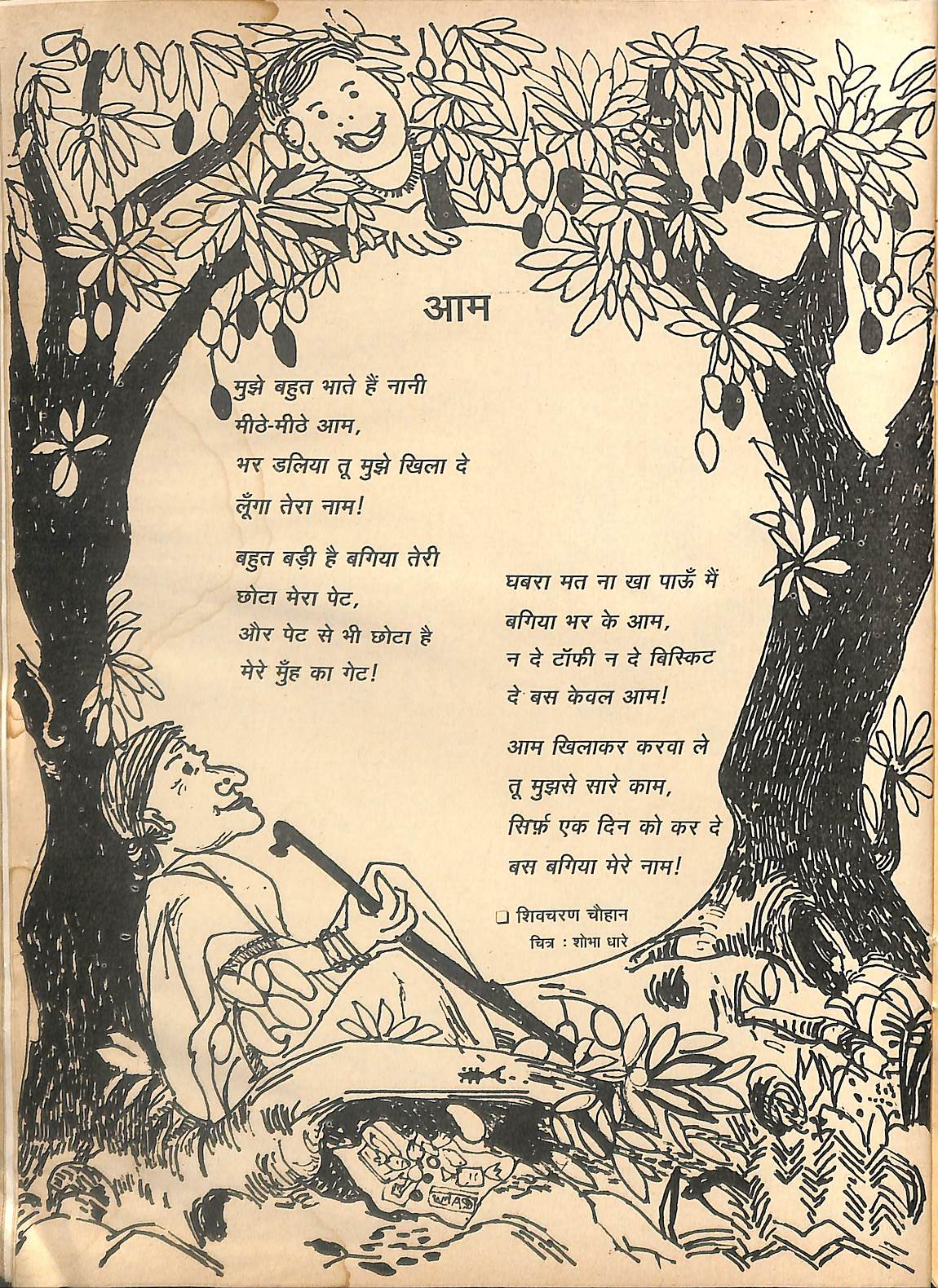
1. अधिक कारनामे में हक़ (4)
4. सर पकड़ने में है स्पर्श (3)
6. छोटा सरोज और उसका समूह भी (4)
7. धन-सम्पत्ति (2)
9. नमन कीजौ में ढूँढो चटपटा (4)
11. सिरा हाल में है खेत में गिरे दानों के सहारे जीने वाले (4)
15. धूल भी, पराग भी (2)
16. सार बिना में भूलना (4)
18. जिसकी मिसाल दी जाए, कहावत (3)
19. बराबर हिस्सों में बाँटना (4)

संकेत : ऊपर से नीचे

1. संसार की सबसे बड़ी नदी (4)
2. कौआ (2)
3. वह महीना जिसके अंत में ईद मनाते हैं। (4)
4. नीर में मिलाओ आधा पर तो फटा दूध मिले (3)
5. दसन में ढूँढो वह बात जो प्रामाणिक हो (3)
8. मकर की गड़बड़ में है झूले की पेंग (3)
10. हारकर डोली उठाई उठाने वालों ने (3)
11. कँपकँपी (4)
12. राजकीय संदेशवाहक (4)
13. कानून-क़ायदा (3)
14. बिल काटने में योग्य व्यक्ति (3)
17. नष्ट करना और आदमी भी (2)

■ *शिवनारायण गौर, हिरनखेड़ा*
ज़िला - होशंगाबाद, म. प्र.
द्वारा भेजी वर्ग पहेली पर आधारित।

● सर्वशुद्ध हल भेजने वालों को चकमक तीन-माह तक उपहार में भेजी जाएगी। हल के लिए वर्ग पहेली की जाली को चकमक से काटकर न भेजें। बल्कि उसमें जो शब्द आने वाले हों उन्हें संकेत के ही नंबर देकर लिख दें। वर्ग पहेली - 35 का हल अगस्त, 94 अंक में देखें।



आम

मुझे बहुत भाते हैं नानी
मीठे-मीठे आम,
भर डलिया तू मुझे खिला दे
लूँगा तेरा नाम!

बहुत बड़ी है बगिया तेरी
छोटा मेरा पेट,
और पेट से भी छोटा है
मेरे मुँह का गेट!

घबरा मत ना खा पाऊँ मैं
बगिया भर के आम,
न दे टॉफी न दे बिस्किट
दे बस केवल आम!

आम खिलाकर करवा ले
तू मुझसे सारे काम,
सिर्फ़ एक दिन को कर दे
बस बगिया मेरे नाम!

❑ शिवचरण चौहान

चित्र : शोभा धारे

मनुष्य महाबली कैसे बना!

बिन बोली-बोली

प्रागैतिहासिक मानव हमारी तरह बोल नहीं पाता था। असल में बोलने के लिए यानी शब्द उच्चारित करने के लिए मुँह की बनावट जिस तरह होनी चाहिए, वैसी उसके मुँह की नहीं थी। समय के साथ-साथ, धीरे-धीरे पूरी खोपड़ी, और मुँह की बनावट में बदलाव आया और फिर बोलना सम्भव हो सका।

फिर भी प्रागैतिहासिक मानव को बोलना तो पड़ता ही था। मिल-जुलकर किया गया काम, बोली की अपेक्षा करता था।

तो वह औरों के साथ कैसे बात करता था?

वह जो कुछ कहना चाहता था, उसे कहने के लिए अपने सारे शरीर का उपयोग करके वह बात करने की भरसक कोशिश करता था। और इसलिए वह अपने चेहरे की पेशियों, अपने कंधों, पैरों और सबसे अधिक अपने हाथों का उपयोग करता था।

तुमने कभी कुत्ते से बात करने की कोशिश की है? कुत्ता जब कुछ समझाना चाहता है, तो वह हमारी आँखों में देखता है, अपनी थूथनी चुभाता है, अपने पंजे हमारी गोद में रखता है, अपनी दुम हिलाता है, बैचेनी के मारे पसरता और जम्भाईयाँ लेता है। वह शब्दों का उपयोग नहीं कर सकता और इसलिए उसे अपना अभिप्राय व्यक्त करने के लिए अपनी सारी देह का- नाक के सिरे से लेकर दुम के छोर तक - उपयोग करना पड़ता है।



प्रागैतिहासिक मानव भी नहीं जानता था कि शब्दों को कैसे कहे। लेकिन उसके हाथ थे, और वे उसे अपनी बात समझाने में सहायता करते थे। वह काम के लिए अपने हाथों का उपयोग करता था, मगर उसे अपने काम के लिए भाषा की भी आवश्यकता थी।

शायद यह कहने के बजाय कि 'इस काटो' प्रागैतिहासिक मानव हवा को अपने हाथों से काटा करता था; यह कहने के बजाय कि 'इसे मुझे दो', वह अपना हाथ आगे फैला दिया करता था; यह कहने के बजाय कि 'यहाँ आओ', वह अपना हाथ अपनी तरफ हिलाया करता था। अपने हाथों की सहायता के लिए वह अपनी आवाज़ का उपयोग करता था - दूसरे आदमी का ध्यान आकर्षित करने और उसे अपने हाथों के इशारे देखने पर मजबूर करने के लिए वह गरजता था, गुर्राता था या चिल्लाता था।

इशारों की भाषा

हमने अभी भी एक निजी इशारों की भाषा को सुरक्षित रखा है।

जब हम 'हाँ' कहना चाहते हैं, तो हम हमेशा इस शब्द को नहीं कहते। अक्सर, हम बस सिर हिला देते हैं।

जब हम कहना चाहते हैं 'वहाँ', तो हम कभी-कभी अपनी तर्जनी उस ओर उठा देते हैं।

जब हम किसी का अभिवादन करते हैं, तो हम झुक जाते हैं। हम अपना सिर हिलाते हैं, अपने कंधे उचकाते हैं, अपने कंधे उठाते और हाथों को फैलाते हैं, हम त्यौरी चढ़ाते हैं, होंठ काटते हैं, किसी की तरफ उंगली उठाते हैं, मेज़ को थपथपाते हैं, अपने पैर पटकते हैं, अपने हाथ हिलाते और मसोसते हैं, सिर को हाथों में थामते हैं, दिल को अपने हाथ लगाते हैं, अपने हाथ पसारते हैं, मिलाने के लिए अपना हाथ पेश करते हैं या विदा होते समय हाथ हिलाते हैं।

यह एक पूरी बातचीत है, जिसमें एक भी शब्द नहीं बोला गया है।

और यह 'बिना बोली की भाषा' यह इशारों की बोली ख़त्म नहीं होना चाहती। ठीक है कि इसमें कुछ अच्छाइयाँ भी हैं। कभी-कभी एक इशारा एक लम्बी बातचीत से ज़्यादा कह सकता है। एक अच्छा अभिनेता खामोश रह सकता है, मगर आध घंटे के भीतर उसकी भौंहें, आँखें और होंठ हमसे सौ से ज़्यादा शब्द कह चुके होंगे।

फिर भी, अपनी बोलचाल में इशारों की भाषा के उपयोग को शिष्टतापूर्ण नहीं समझा जाता।

फिर भी, ऐसे मौके आते ही हैं, जब हमें मूक भाषा की ज़रूरत पड़ती है। क्या तुमने कभी दो जहाज़ों को आपस में झण्डों के इशारों से 'बात करते' देखा है? हवा, लहरों और कभी-कभी गोलाबारी तक की आवाज के ऊपर अपनी बात पहुँचाने के लिए आदमी को कितनी जोरदार आवाज की जरूरत होगी! ऐसे अवसरों पर हमारे कान काम देना बन्द कर देते हैं और हमें अपनी आँखों का सहारा लेना पड़ता है।



तुम सम्भवतः इशारों की भाषा का अक्सर इस्तेमाल करते हो। कक्षा में जब तुम अध्यापक का ध्यान खींचना चाहते हो, तुम अपना हाथ उठा देते हो। और यह ठीक भी है। तीस या चालीस बच्चों के एक साथ बोलने की बात भी सोच सकते हो क्या?

इस तरह हम देखते हैं कि इशारों की भाषा में अच्छाइयाँ भी हैं, क्योंकि यह इतने हजारों साल बची रही है और अभी तक लोगों के लिए आवश्यक है।

बोली इशारों की भाषा पर विजयी हो गई है, लेकिन पूरी तरह से नहीं। जंगल में हर जानवर उन हजारों ही संकेतों को सुनता और देखता रहता है, जो सभी ओर से उस तक पहुँचते रहते हैं। कोई डाल तड़कती है - यह कोई दुश्मन हो सकता है - और जानवर भागने या अपनी रक्षा करने के लिए तैयार हो जाता है।

बिजली गिरती है, हवा पत्तियों को डालियों से उड़ाती जंगल को चीरती चली जाती है - जानवर आने-वाले तूफान से बचने के लिए अपने घोंसलों या बिलों में छिप जाते हैं।

जब सड़ती हुई पत्तियों और खुमियों की गंध के साथ मिलती हुई शिकार की गंध नम ज़मीन पर होकर बहती आती है, तो जानवर गंध पर चलता है और अपने शिकार को पकड़ लेता है।

हर सरसराहट, हर गंध, घास पर हर पद चिन्ह, हर चीख या सिसकार कुछ-न-कुछ मतलब रखती है और तुरन्त ध्यान देने का तकाज़ा करती है।

प्रागैतिहासिक मनुष्य भी बाहरी दुनिया के संकेतों को सुना करता था। फिर भी उसने जल्दी ही एक भिन्न प्रकार के संकेतों को समझना भी सीख लिया। ये वे संकेत थे, जो उसके समूह के लोग उसे भेजते थे।

मिसाल के तौर पर, अगर प्रागैतिहासिक शिकारी को जंगल में बारहसिंघे के पदचिन्ह मिलते, तो वह अपने पीछे के और शिकारियों को संकेत करने के लिए अपना हाथ हिलाता। उन्होंने जानवर को नहीं देखा था, मगर उसके संकेत उन्हें चौकन्ना कर देते। वे अपने हथियारों को और मजबूती से पकड़ लेते थे मानो उन्होंने बारहसिंघे के बड़े-बड़े सींगों और हिलते हुए कानों को सचमुच देख लिया हो।

जानवर के पदचिन्ह एक संकेत थे।

पदचिन्हों के बारे में औरों को बताने के लिए शिकारी के हाथ का सहसा उठना संकेत के बारे में संकेत था।

हर बार जब कोई शिकारी जमीन पर पदचिन्ह देखता या झाड़ियों में से जानवर के खिसकने की सरसराहट सुनता, वह इस संकेत के बारे में दूसरे शिकारियों को संकेत भेजता।

इस तरीके से प्रकृति द्वारा मनुष्य को दिए गए संकेतों के अलावा बोली भी एक और संकेत बन गई, एक ऐसा संकेत, जिससे कुल के सदस्य एक-दूसरे को संकेत कर सकते थे।

आरम्भ में ये संकेत मात्र चीखें तथा इशारे थे। ये व्यक्ति के नेत्रों तथा कानों द्वारा ग्रहण किए जाते थे और एक केंद्रीय टेलीफोन स्टेशन की ही तरह उसके मस्तिष्क को भेज दिए जाते थे। जब मस्तिष्क 'किसी संकेत के बारे में संकेत' ग्रहण करता - 'एक जानवर आ रहा है'- वह तुरन्त आदेश दे देता- हाथों, अपना दोहरे फलों वाला भाला कसकर पकड़ लो; आँखों; झाड़ियों पर सावधानी से आँख जमाए रखो; कानों, हर सरसराहट और हर आवाज को सुनो! जानवर अभी आँख और कान की पहुँच के बाहर ही था, लेकिन शिकारी उसके लिए ही तैयार था।



इशारे और चीत्कार जितने अधिक होते, जितने अधिक 'संकेतों

के बारे में संकेत' मस्तिष्क में पहुँचते, 'केन्द्रीय स्टेशन' के लिए, उतना ही अधिक काम होता। इसका मतलब है कि 'केन्द्रीय स्टेशन' को बढ़ते रहना पड़ा। मस्तिष्क में लगातार नई-नई कोशिकाएँ बनती गईं और उनके संयोजन अधिकाधिक जटिल होते गए। स्वयं मस्तिष्क भी बड़ा होता गया।

जैसे-जैसे उसका मस्तिष्क विकसित होता गया, प्रागैतिहासिक मानव विचार करना सीखता गया।

जब वह कोई ऐसा संकेत देखता या सुनता, जिसका मतलब 'सूरज' था, तो वह सूरज की ही बात सोचता, चाहे उस समय आधी रात ही क्यों न हो।

जब उसे जाकर भाला लाने का संकेत दिया जाता, तो वह भाले की ही सोचता, यद्यपि उस समय वह कहीं नज़र नहीं आता था।

मिल-जुलकर किए जाने-वाले काम ने मनुष्य को बोलना सिखाया, और जब उसने बोलना सीख लिया, तो उसने विचार करना, सोचना भी सीख लिया।

आदमी को अपना मस्तिष्क प्रकृति से भेंट में नहीं मिला। उसने इसे अपने हाथों के श्रम की बदौलत अर्जित किया।

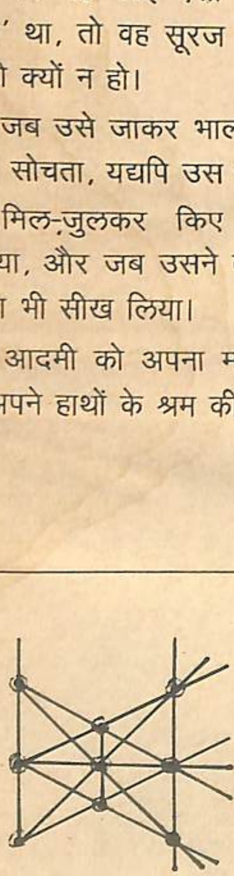
(अगले अंक में जारी)

'मनुष्य महाबली कैसे बना!' से साभार!

प्रस्तुति : राजेश उत्साही

माथा पच्ची हल: अप्रैल, 94 अंक के

2.



3. 888
88
8
8
+8
1000

4. 20 डिग्री फैरनहाइट का मतलब है इस बाल्टी में बर्फ़ जमी होगी। इसलिए जिस बाल्टी में 20 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान है उस बाल्टी में अठन्नी पहले नीचे पहुँचेगी।

6. दूसरे किसान का खेत बड़ा है यानी 9 वर्ग किलोमीटर।

7. रश्मि, मोहन की ममेरी भांजी यानी मामा की लड़की की लड़की है।

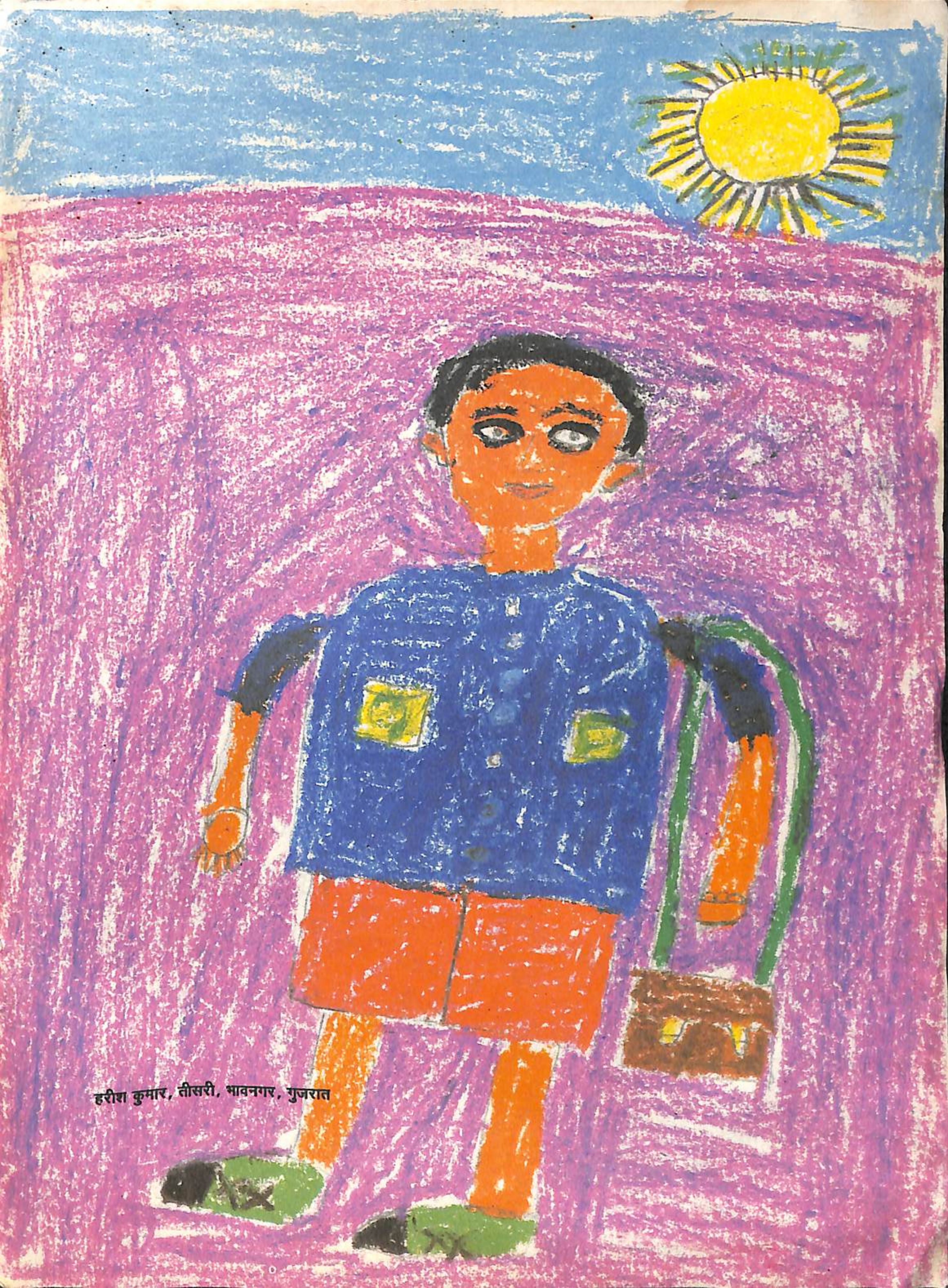
वर्ग पहेली - 31

1 न	क	2 दी		3 शा		4 ध	मा	5 का
क		6 प	रि	व	र्त	न		र्या
ल				क				ल
7 ची	र	फा	8 ड़		भी	9 म	10 का	य
		गु				खो		
11 म	या	न	क		12 का	ना	रा	13 जा
य				14 ना				ल
भी		15 रा	सा	य	16 नि	क		सा
17 त	बा	ही		र		म	ह	ज़

वर्ग पहेली - 32

	1 घ		2 ना	या	3 ब		4 स	
5 च	मा	च	म		6 या	स	मी	न
	सा		ज		र		क्ष	
7 पा	न		8 द	र्जी		9 धौं	क	10 ना
र			गी		11 ख			दि
12 खी	13 ज	ना		14 ख	त		15 क	र
	ला		16 ऋ		र		र	
17 अ	व	शे	ष		18 ना	नु	क	र
	र्त		19 भ	न	क		रा	

वर्ग पहेली -31 के सर्वशुद्ध हल भेजने वाले पाठक हैं- एच.एन पटेल, भैंसमा, **बिलासपुर**; सरिता साहू, भखारा एवं सुनीता साहू, डोंगरडुला, दोनों **रायपुर, म.प्र.**। इन्हें तीन माह तक उपहार में चकमक भेजी जाएगी। **वर्ग पहेली -32 का एक भी सर्वशुद्ध हल प्राप्त नहीं हुआ है।**



हरीश कुमार, तीसरी, भावनगर, गुजरात

चकमक पंजीयन क्रमांक 50309/85 के अंतर्गत भारत के समाचार-पत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत। डाक पंजीयन क्रमांक BPL/DN/MP/431/94



सुरभि तिवारी, पाँच वर्ष, छिन्दवाड़ा, म.प्र.

रेक्स डी रोज़ारियो की ओर से विनोद रायना द्वारा राजकमल ऑफसेट प्रिन्टर्स, भोपाल से मुद्रित एवं एकलव्य, ई-1/208, अरेरा कालोनी, भोपाल-462 016 से प्रकाशित।
संपादक : विनोद रायना